			सां					प			
पध	सां	सां	ध	—	प	सां	ध	ध	प	—	ग
राऽ	ऽ	ग	रं	ऽ	ग	सु	र	वं	धा	ऽ	न
सा	—	ग	—	ग	ग	प	—	प	प	ध	—
गो	ऽ	पी	ऽ	स	व	गा	ऽ	व	त	हैं	ऽ
सां	—	ध	प	ग	रे	सा	रे	—	साध	सा	—
मं	ऽ	ग	ल	ऽ	व	धा	ऽ	ऽ	ईऽ	ऽ	ऽ

आभोग

×		०		२		०		३		४	
प	ग	प	प	ध	ध	सां	ध	सां	सां	—	सां
च	तु	भुँ	ज	गि	रि	ध	र	न	ला	ऽ	ल
सां											
ध	—	सां	सां	रें	रें	सारें	गं	रें	सां	—	ध
आ	ऽ	र	ती	ऽ	ब	नीऽ	ऽ	र	सा	ऽ	ल
सांध	प	ध	ध	प	ध	सां	—	ध	सां	सां	—
तऽ	न	म	न	ध	न	वा	ऽ	र	ति	हैं	ऽ
						ध					
गं	रें	सां	ध	प	ध	सां	ध	प	ग	रे	सा
ज	सु	म	ति	नं	द	रा	ऽ	ऽ	ई	ऽ	ऽ

राग—विभास, ताल—धमार

प्रातसमैं नंदलाल खेलत हैं हरि होरी ।
सीस पाग झुकि रही केसर रंग बोरी ॥ १ ॥
हाथन पिचकाइ लिये अबीर भरि झोरी ।
सब नारि जुरिके आई, नंदराय की पोरी ॥ २ ॥
राधा जु खेलत डोलत, सांकरी सी खोरी ।
सूरदास—मदनमोहन, भली बनी है जोरी ॥ ३ ॥

स्थायी

प ग प ध	सां — ध प —	ग प	ध — प
श्रा — त स	मैं — — नं —	द —	ला — ल
३ ०	× ०	२	०
ग रे सा सा	प ग प ध —	प गप	रे — सा
खे — ल त	है — — हो —	हो —	हो — री
३ ०	× ०	२	०

अंतरा

प — ध सां —	सां —	रें सां ध	सां — सां —
सी — स पा —	ग —	झु कि —	र — ही —
× ०	२	०	३ ०
ध सां ध प गप	ध प	रे — सा	प ग प ध
के — — स र—	रं ग	भो — री	श्रा — त स
× ०	२	०	३ ०

संचारी

प ग — प —	प —	ध प ध	सां — ध प
स बे — ना —	री —	जु रि कैं	आ — ई —
× ०	२	०	३ ०
ध — प ग प	ध प	ग रे ग	प ग प —
नं — द जु —	की —	पी — —	री — — —
× ०	२	०	३ ०

'आभोग' अन्तरानुसार।

राग खट : संक्षिप्त परिचय

खट एक प्राचीन राग है ।

इसके दो प्रकार प्रचार में हैं–एक है भैरव थाट का अरौ दूसरा आसावरी थाट का । अष्टछाप संगीत परम्परा के अनुसार भैरव थाट का प्रकार प्राचीन है । इस राग के पद अधिकतर मंगला एवं शृंगार-दर्शन के पूर्व ही गाये जाते हैं । विषयवस्तु की दृष्टि से भी इन पदों में दिन के प्रथम प्रहर तक की लीला का ही वर्णन मिलता है; जैसे "पाछली रात परछांहि पातन की ।" "आज उठि भोर नवकुंज कानन सखी ।" "आज नंदलाल सुख–चन्द" इत्यादि । इन पदों को भैरव राग के समय की मर्यादा में ही गाने कीं प्रणाली है ।

खट का वादी स्वर धैवत और संवादी स्वर गांधार माना जाता है, परन्तु भैरव थाट के प्रकार में वादी स्वर पंचम मानना ही सुसंगत होगा । खट के इस प्रकार का गान–समय दिन का प्रथम प्रहर मानना उपयुक्त है । खट राग में छः रागों की छाया होने की मान्यता के कारण इसका थाट भैरव होते हुए भी दोनों गांधार, दोनों धैवत का तथा अवरोह में कोमल निषाद का भी प्रयोग किया जाता है । इसकी जाति सम्पूर्ण है । गांधार से उठाव, पंचम स्वर पर न्यास तथा धैवत आन्दोलित दिखाई देता है ।

चलन :–रे नि़ सा, ग म, प, प, ध, ध प, सां, ध, प, ग, म,
नि, ध, प, ध प, ग, म, प, ग म रे सा

राग–खट, ताल–चर्चरी (प्राचीन अंग)

आज नंदलाल मुखचंद नैनन निरखि, परम मंगल भयो भवन मेरे ।
कोटि कंदर्पलावण्य एकत्र करि, वारुं तबही जबहिं नेंक हेरें ॥१॥
सकल सुखसदन हरखित सुंदर वदन, गोपवर प्रबलदल मदन संग घेरें ।
कहो कोउ कैसेहु नाहि सुधबुध बने, 'गदाधर मिश्र' गिरिधरन टेरें ॥२॥

स्थायी

सा	—	सा	म	म	प	—	प	प	प
आ	ऽ	ज	नं	द	ला	ऽ	ल	मु	ख
×			२		०		३		

ध̲	—	ध̲	ध̲	—	सां	सां	सां	ध̲	प
चं	ऽ	द	नैं	ऽ	न	न	नि	र	ख
×			२		०		३		

ग	म	नि̲	ध̲	प	प	प	ग̲	म	—
प	र	म	मं	ऽ	ग	ल	म	यो	ऽ
×			२		०		३		

ग	म	ध̲	प	—	गम	गप	म	रे̲	सा
भ	व	न	मे	ऽ	रेऽ	ऽऽ	ऽ	ऽ	ऽ
×			२		०		३		

अंतरा

ध̲	—	ध̲	ध̲	—	नि	सां	सां	सां	—
को	ऽ	टि	कं	ऽ	द	ऽ	पं	ला	ऽ
×			२		०		३		

ध̲	—	ध̲	नि	सां	रें	सां	सां	ध̲	प
व	ऽ	ण्य	ए	ऽ	क	ऽ	त्र	क	र
×			२		०		३		

नि	नि	नि	ध	म	प	ध	नि	सां	—
चा	ऽ	रुं	त	व	ही	ऽ	उ	व	ऽ
×			२		०		३		×
रें	नि	ध	प	मप	गम	प	म	रें	सा
नं	ऽ	क्ष	है	ऽऽ	ईऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ
×			२		०		३		×

संचारी

म	म	ग	म	म	प	प	प	—	—
स	क	ल	सु	व	स	द	न	ऽ	ऽ
×			२		०		३		×
ध	ध	ध	सां	सां	रें	सां	सां	ध	प
ह	र	खि	त	सुं	द	र	व	द	न
×			२		०		३		
नि	—	ध	ध	म	प	ध	नि	ध	प
गो	ऽ	प	व	र	प्र	ब	ल	द	ल
×			२		०		३		
ग	म	ध	प	म	ग	म	रें	—	सां
स	द	न	सं	ग	थे	ऽ	रें	ऽ	ऽ
×			२		०		३		

'आभोग' अंतरानुसार ।

राग—खट, ताल—चर्चरी (झपताल अंग)

आज उठि भोर नवकुंज कानन सखी ठाडि भइ राधिका रंगभीनी ।
बिलस सुख संग नवरंग पिय स्यामघन कामकी सेन सब जीत लीनी ॥१॥
सुभग बिकसत वदन नेन अति रससमसे मोरि मुख हसि कछु सकुच कीनी ।
श्रीविठ्ठल गिरिधरन संग नव नागरी जागि सब रैनि आनंद दीनी ॥२॥

स्थायी

नि			म						
सा	—	सा	ग	म	प	—	प	प	प
आ	—	ज	उ	ठि	भो	—	र	न	व
×		२			०		३		
नि		नि	नि					नि	
ध	—	ध	ध	—	सां	सां	सां	ध	प
कुं	—	ज	का	—	न	न	स	खी	—
×		२			०		३		
म									
ग	म	म	नि	धप	नि	धप	प	ग	म
ठा	—	डि	भ	इ—	रा	——	धि	का	—
×		२			०		३		
ग	म	नि	ध	प	ग	मग	म	रे	सा
रं	—	ग	भी	—	नी	——	—	—	—
×		२			०		३		

अंतरा

प	प	प	नि ध	नि ध	नि	सां	सां	सां	सां
वि	ल	स	सु	ख	सं	—	ग	न	व
×		२			०		३		
नि ध	—	नि	सां	सां	रें	सां	सां	नि ध	प
रं	—	ग	पि	य	स्या	—	म	घ	न
×		२			०		३		
सां नि	—	सां नि	सां नि	—	ध प	ध	नि	सां	सां
का	—	म	की	—	से	—	न	स	ब
×		२			०		३		
रें	सां	नि	ध	म	प	ध	नि	सां	—
जी	—	त	ली	—	नी	—	—	—	—
×		२			०		३		
ध	—	प	ग	म					
आ	—	ज	नं	द					
×		२							

संचारी

म	म	म	म	म	प	प	प	प	प
सु	भ	ग	वि	क	स	त	ब	द	न
×		२			०		३		
नि		नि	नि	नि					
ध	—	ध	ध	ध	सां	सां	सां	ध	प
ने	—	न	अ	ति	र	स	म	से	—
×		२			०		३		
		नि			ग	म			
ग	म	ध	प	प	म	रे	रे	ग	म
मो	—	र	मु	ख	ह	सि	क	छु	—
×		२			०		३		
							म		
ध	प	प	ग	म	मग	मग		रे	सा
स	कु	च	की	—	नी	—	—	—	—
×		२			०		३		

आभोग

नि		नि	नि	नि					
ध	—	ध	ध	ध	नि	सां	सां	सां	सां
श्री	—	वि	ठ	ल	गि	रि	ध	र	न
×		२			०		३		

ध	—	नि	सां	सां	रें	सां	सां	सां	—
सं	—	ग	न	व	ना	—	ग	री	—
×		२			०		३		
सां नि	सां नि	सां नि	ध	म	प	ध	नि	सां	—
जा	—	गि	स	व	रे	—	नि	आ	—
×		२			०		३		
रें	सां	सां	नि	ध	प	ध	नि	सां	—
ने	—	द	दी	—	नी	—	—	—	—
×		२			०		३		

राग परज—संक्षिप्त परिचय

जहां कोमल धैवत रिखब, तीव्र गंधार निखाद ।
द्वै मध्यम मंडित परज, परि संवादी वादि ॥

परज पूर्वी थाट का प्राचीन राग है । इस राग में दोनों मध्यम का स्पष्ट प्रयोग किया जाता है । इसकी जाति सम्पूर्ण और वादी स्वर षड्ज तथा संवादी पंचम है । गान–समय रात्रि का अन्तिम प्रहर माना जाता है । यह राग उत्तरांग-प्रधान है अतः तार षड्ज स्वर वैचित्र्यप्रदायक लगता है । इसकी प्रकृति चंचल है । प्रचलित वसन्त राग से यह राग सहज ही अलग दिखाई देता है । इस राग के गान में बहुत कुछ तानें निषाद पर पूर्ण की जाती हैं । 'सां रे' सां रें नि नि ध नि' — यह स्वर–संगति अनेक बार दिखाई देती है, तथा 'ध प, ग म ग प ध नि सां' – यह स्वर–समुदाय भी रागवाचक है ।

आरोहावरोह :—नि़ सा ग, म ध नि सां, सां नि ध प, म प ध प
ग म ग, म ग रे सा,

पकड़ :—सां नि ध प, मे प ध प, ग म ग

विस्तार :—(१) नि़ सा ग, मे ध नि, सां, ध नि सां रे नि सां, नि ध प, मे प
ध प, ग म ग, मे ग रे सा
(२) प, मे प, ध नि ध प, ध नि सां नि ध प रे नि सां, ध प,
मे ध नि रें ग, रे सां, ध प मे ग रे सा
(३) सां, रे सां, रें नि सां ध नि सां, ध नि सां रें नि सां,
मे ध नि सां रें सां, रें ग मे ध नि, सां, गं मं गं, मं गं
रें सां, ध रें सां रें नि

अन्य रागों की अपेक्षा यह राग आजकल कम सुनने में आता है। अष्टछाप संगीत प्रणाली में यह राग शीतकाल में मंगला—शृंगार–समय में गाया जाता है, जब कि ललित और मालकौंस गाये जाते हैं। शीतकाल में मंगला के दर्शन सूर्योदय के पूर्व होने की परम्परा है। रात्रि के अन्तिम प्रहर में इन रागों के गायन से मन्दिर का वातावरण मधुर बन जाता है! यहां परज राग के पदों में से अष्टछाप के महाकवि नन्ददासजी–रचित खंडिता नायिका के भाव का एक पद तथा दूसरा पद जन्म बधाई का स्वरलिपि के साथ प्रस्तुत किया जा रहा है।

राग–परज, ताल–चौताल (ध्रुपद)

रंगभरी मुरत अनंगभरी अँखियां संग लिये प्यारी कों महल मेरें आये हो॥ बेठोजु पलंग पर पलकनसों झारूं पाय तन मन नौछावर करि भागिनतें पाय हो॥१॥ ऐसी है जो कौन नारि बदन बिलोक्यो जाहि वाहीकें रहोजु लाल मन मुसिकाय हो॥ नंददासप्रभु प्रिय रसिक मुकुट मनि मोहिनी के मोहिवेकों मोहन बनि आये हो॥२॥

स्थायी

सां						सां					
नि	—	सां	रे	सां	—	नि	सां	नि	ध	प	ध
रं	—	ग	भ	री	—	मु	—	र	त	—	अ
×		०		२		०		३		४	
ध			सां			प					
म	म	ध	नि	सां	नि	ध	प	ग	म	ग	—
नं	—	ग	भ	—	री	अ	खि	—	यां	—	—
×		०		२		०		३		४	
ग	रे	सा	ग	—	ग	म	ध	नि	सां	—	सां
सं	—	ग	लि	—	ये	प्या	—	री	कों	—	म
×		०		२		०		३		४	
रें		रें	नि	सां	नि	ध	सां	नि	ध	म	ध
ह	—	ल	भ	—	रे	आ	—	—	ये	—	हो
×		०		२		०		३		४	

अंतरो

ध			ध			सां					
म	—	ग	म	—	ध	नि	सां	सां	सां	—	सां
बै	—	ठो	जु	—	प	लं	—	ग	प	—	र
×		०		२		०		३		४	
नि									सां		
सां	रें	सां	रें	नि	सां	नि	—	ध	नि	—	नि
प	ल	क	न	सों	—	झा	—		पा	—	य
×		०		३		०		३		४	

5112

सां नि	नि	रें॒	गं	गं	गं	मं॑	मं॑	गं	रें॒	रें॒	सां
त	न	—	म	—	न	नौ	छा	व	र	क	रि
×		०		२		०		३		४	
नि	सां	रें॒	नि	सां	नि	ध॒	सां	नि	ध॒	म॑	ध
भा	—	गि	न	—	तैं	पा	—	—	ये	—	हो
×		०		२		०		३		४	

संचारी

म॑	—	ग	ग	म	म	ग	—	म	ग	—	ग
ए	—	सी	हे	—	जो	कौ	—	न	ना	—	रि
×		०		२		०		३		४	
ग	ग	रे॒	म॑ ग	—	म॑	ग	—	रे॒	सा	—	सा
ब	द	—	न	—	वि	लो	—	क्यो	जा	—	हि
×		०		२		०		३		४	
सा	नि़	रे॒	ग	म	ग	म॑	ध॒	नि	ध ध॒	प	म॑
वा	—	ही	कें	—	र	हौं	—	जु	ला	—	ल
×		०		२		०		३		४	
ग	ग	रे	ग	—	म॑	ग	—	रे॒	ग	रे॒	सा
म	न	—	मु	—	सि	का	—	य	हो	—	—
×		०		२		०		३		४	

---

* इसके स्थायी अंतरा में ध॒ स्वर के नीचे कोमल का चिह्न रह जाने से सुधार लेना ।

राग परज–ताल खटताल (प्राचीन)

अष्टछाप के महाकवि परमानन्ददासजी–रचित जन्माष्टमी की बधाई का निम्नांकित पद संगीत की मुद्रित पुस्तकों में रामकली राग के नाम से प्रकाशित किया गया है लेकिन नाथद्वारा–कांकरोली के घरानों में यह परज राग में गाया जाता है। लेखक ने नाथद्वारा के मुख्य कीर्तनकार गोविन्दरायजी से इसे परज में ही सुना था।

सुनोरी आज मंगल बधायो है।
नंदमहर–घर रानी जसोदा ढोटा जायो हे ॥१॥

* * *

हरखें देव सुमन बरखें नभ निसान बजायो हे।
'परमानन्द' नन्दनन्दन को सुजस सुनायो हे ॥१०॥

स्थायी

×	२	३	०	४	५	६	०	×	२	३	०	४	५	६	०
सा	सा	ग	ग	म॑	ध॒	नि	सां	रें॒	सां	नि	ध॒	सां	नि	ध॒	प
मं	ग	ल	ब	धा	—	यो	—	हे	—	—	सु	नों	री	आ	ज
म॑ध॒	निसां	नि	ध॒	म॑	ध॒	नि	ध॒	नि	—	—	ध॒	प	ग	म	ग
मं	ग	ल	ब	धा	—	यो	—	हे	—	—	सु	नो	री	आ	ज

अंतरा

×	२	३	०	४	५	६	०	×	२	३	०	४	५	६	०
—	ध॒	म॑	ध॒	नि	नि	सां	सां	—	रें॒	सां	रे॒	नि	ध॒	नि	—
—	नं	द	म	ह	र	घ	र	—	रा	नी	ज	सो	—	दा	—

अष्टसखादि महानुभावों ने ललित राग में खंडिता नायिका का वर्णन किया है, वह उपर्युक्त शास्त्रीय वर्णन के अनुसार उपयुक्त ही है। पुष्पों की माला, तरुण अवस्था, गौर वर्ण, कमल के समान नेत्र, प्रभात के समय दैवयोग से पति का आगमन, कापट्यपूर्ण संभाषण आदि शृंगार रसानुकूल भाव खंडिता नायिका के वर्णन की दृष्टि से उचित है।

ललित राग के स्वरों के सम्बन्ध में संगीतशास्त्र के ग्रंथों में मतैक्य नहीं है। कहीं रे प वर्ज्य धैवत कोमल का उल्लेख है तो कहीं धैवत शुद्ध का उल्लेख हुआ है। इस विषय में विस्तृत चर्चा के उपरान्त पं. भातखंडेजी ने हिं. सं. प. शास्त्र पुस्तक ३ में शुद्ध धैवत का समर्थन किया है। प्रतापसिंह ने हिंदोल की रागिनी ललित का वर्णन निम्नानुसार किया है– "शास्त्र में तो यह पाँच सुरन सों गायो है– 'सा ग प ध नि सा'। यातें औड़व है अथवा सा रे ग म प ध नि यातें सम्पूर्ण है और कोई याको आरंभ धैवत सों कहत हैं। ध नि सा ग प ध। याको सूरज के उदय पहिले एक घड़ी में गाइये। रात के चौथे पहर में चाहो जब गावो।"

"संगीतदर्पण" से ग्रहांशन्यास षड्ज। आलापचारी। सा $\underline{\text{रे}}$ ग म, गम, $\underline{\text{ध}}$, म। $\underline{\text{ध}}$ प म, गमग। $\underline{\text{रे}}$ नि रे ग $\underline{\text{रे}}$ सा। भैरवपुत्र ललित के वर्णन में आलापचारी अलग नहीं बताई गयी है परन्तु शास्त्रानुसार "यह पाँच सुरन सों गायो है। सा ग म प ध नि सा।" (संगीतशास्त्र, भाग ३, पृष्ठ ३०३)

उपर्युक्त मतों के अध्ययन, 'लक्ष्यसंगीत' 'कल्पद्रुमांकुर' 'चन्द्रिका' 'चन्द्रिकासार' इत्यादि ग्रंथों तथा परम्परागत प्रचलित ललित के आधार पर तीव्र धैवत का ही प्रचार माना जाता है। 'नादचिन्तामणि' (पृ. ७६)

में ललित के स्वरों में धैवत शुद्ध है । सा $\underline{\text{रे}}$ ग म म ध सां ।

सां नि ध $\overset{।}{\text{म}}$ म म रे सा ।

मेरे गुरुजी पं. वाडीलालजी का मत था कि ललित में आधुनिक कोमल धैवत से कुछ ऊँचा और शुद्ध धैवत से कुछ नीचा स्वर लगाते हुए गायकों को सुना है । अतः हमारे मतानुसार इस प्रकार का धैवत का स्थान पंचम की चौथी श्रुति पर होना वास्तविक होगा । इस सन्दर्भ में पं. भातखंडेजी के शास्त्रग्रंथ भाग ३ (पृ. ३०२) में लिखा है– "नवीन श्रुतिव्यवस्था में षड्ज पहिली श्रुति पर आ जाता है । उसके निकट चौथी श्रुति पर २७० का ऋषभ होगा और इसी प्रकार ४०५ का धैवत पंचम के आगे चौथी श्रुति पर जाएगा ।" किन्तु इस प्रकार धैवत आधुनिक शुद्ध धैवत के निकट होने से पं. भातखंडेजी इत्यादि ग्रंथकारों ने शुद्ध या तीव्र धैवत को मान्य किया है । हवेली संगीत प्रणाली में भी शुद्ध धैवत के प्रयोग की परम्परा है ।

उपर्युक्त परम्परा के अनुसार 'लक्ष्यसंगीत' में दिया गया ललित राग का निम्नलिखित वर्णन उपयोगी होगा ।

मारवामेलनोत्पन्ना रागिणी ललिता मता ।
आरोहे चावरोहेऽपि पंचमेन विवर्जिता ॥
शुद्धमध्यमवादित्वं सर्वैषामेव संमतम् ।
अमात्यत्वं भवेत् षड्जे शास्त्रोक्तनियमागतम् ।
उत्तरांगप्रधानत्वे तारषड्जविचित्रिता ।
सँगतिर्धमयोर्नित्यमपूर्वां रक्तिमावहेत् ॥
मध्यमस्य प्रमुक्तत्वं कस्य न द्रावयेन्मनः ।
तत्स्वरेणैव लक्ष्यं स्याल्ललितांगं स्वतंत्रकम् ॥

ललित राग मारवा थाट से उत्पन्न होता है। पंचम वर्ज्य होने से जाति षाडव मानी जाती है। वादी स्वर शुद्ध मध्यम और संवादी षड्ज है। यह राग उत्तरांगप्रधान है अतः इसका गानसमय रात्रि का अन्तिम प्रहर माना जाता है। इसमें दोनों मध्यमों का प्रयोग होता है। ध म॑ ध म॑ म–इस प्रकार के स्वर बार–बार दिखाई देते हैं तथा ऩि रे॒ ग म, म॑ म ग— इन स्वरों से यह राग शीघ्र पहचाना जा सकता है। कुछ ग्रंथों में कोमल धैवत का उल्लेख है किन्तु हवेली संगीत में तीव्र धैवत लेने का प्रचलन हैं। धैवत और मध्यम की संगति संभालना कुशलता का काम है। ध म॑ म ग स्वरों पर मींड़ लेने से परिणाम सुन्दर दिखाई देता है। आरोह में ऋषभ को दुर्बल बना कर कभी ऩि सा ग म॑, म ग स्वर भी ले सकते हैं किन्तु मन्द्र स्थान में अधिक नीचे ले जाना ठीक नहीं है। इस राग में सामान्यतः निषाद स्वर का गौणत्व रहता हैं। यदि निषाद को आगे लाने का प्रयत्न होगा तो सोहनी राग का अंग दिखाई देगा।

आरोहावरोह—ऩि रे॒ ग म, म॑ म ग, म॑ ध, सां।
रे॒ं नि॑ ध, म॑ ध म॑ म ग, रे॒ सा।

पकड़ स्वर—ऩि रे॒ ग म, ध म॑ ध म॑ म ग

स्वरविस्तार—

(१) सा, रे॒ सा, ग म, म॑ म ग, म॑ ध, म, ग, रे॒ सा, ऩि रे॒ ग म

(२) ऩि रे॒, ग, म॑, म, ध, म॑ ध, म॑, म, ग म, म॑ म, म ग, ऩि,
रे॒ं ग, म।

(३) नि रे ग, म, गम, म ध, सां, रें, नि ध, म, म, गम, म ध:म,
म, मग, रे सा, नि रे ग म ।

(४) ग, म ध, सां, सां, नि रें सां गं रें सां, नि रें नि ध, म ध नि ध,
म ग, म ध, म ग, म, म म ग, ध ग, रे सा, नि रे ग, म ।

राग ललित—ताल त्रिताल

कमलसी अखियाँ लाल तिहारी ।
तिनिसों तकि-तकि तीर चलावत बेंधति छतियाँ हमारी ॥१॥
इन्हें कहा कोउ दोस लगावत ये अजहूँ न सँभारी ॥
'श्रीविठ्ठलगिरिधारी' कृपानिधि सुरत ही तें सुखकारी ॥२॥

स्थायी

०	३	×	२
गम ग रे सा	नि रे ग म	म ऽ म म	ग रे ग —
कऽ म ल सी	अ खि याँ	ला — ल ति	हा — री —

अंतरा

०	३	×	२
— ध म ध	सां सां नि ध	सां ऽ सां सांनि	रें — सां सां
— ति नि सों	त कि त कि	ती — र चऽ	ला — व त
नि रें गं रें	सां रें सां सांसां	नि — ध म	म म ग —
बें — ध ति	छ ति याँ ह	मा — — —	री — — —

संचारी

०	३	×	२
म म ऽ म॑	म ग म म	म ध म म	ग रे॒ ग म
इ न्हें — क	— हा को उ	दो — स ल	गा — व त
ग रे॒ सा सा	नि रे॒ ग म	म॑ — — —	ग रे॒ ग —
ये — अ ज	हूँ — न सं	भा ऽ ऽ ऽ	ऽ ऽ री —

आभोग—"श्रीविठ्ठल गिरिधर" अंतरानुसार

राग ललित—ताल चर्चरी

आज सगरी निसा कहाँ जागे लाल,
  कहोन साँची सुभग साँवरे माधो ।
घोख मंथन सव्द प्रानपति गहगह्यो
  रह्यो मोहन सूर प्रगट भयो आधो ॥१॥
कमल विकसित भये, चकवाकी हसी
  सुमुखि पुलकित जपत कानन आराध्यो ।
विश्वमोहन वदन निरखि नभ चंद्रमा,
  सगवा लज्जित भयो प्रेम गुन बांधो ॥२॥
ललित सुंदर राग ताल चर्चरी धरि,
  मधुप गावत सुजस, पिकनि स्वर सांधो ।
कहे 'कृष्णदास'प्रभु लाल गिरिवरधरन
  पाये व्रजसुंदरी कृपन धन लाध्यो ॥३॥

स्थायी

×	२	०	३
सां — सां	नि ध	म ध	म म —
आ — ज	स ग	री —	नि सा —

म̍	म	ग	ग	—	म̍	ध	सां	—	सां
क	हाँ	—	जा	—	गे	—	ला	—	ल
सां	सां	सां	सां	—	नि	रें̲	नि	ध	ध
क	हो	न	साँ	—	ची	—	सु	भ	ग
म̍	—	ध	नि	ध	म̍	म	ग	म	म̍म
साँ	—	ब	रे	—	मा	—	धो	—	——

अंतरा

×			२		०		३		
ध	म̍	ध	सां	—	सां	सां	सां	—	सां
धो	—	ख	मं	—	थ	न	स	—	ब्द
नि	रें̲	ग	रें̲	सां	नि	रें̲	नि	ध	—
प्रा	—	न	प	ति	ग	ह	ग	ह्यो	—
म̍	ध	—	सां	सां	नि	रें̲	नि	ध	ध
र	ह्यो	—	मो	ह	न	—	सू	—	र
सांम̍	ध	ध	नि	ध	म̍	म	ग	म	म̍म
प्र—	ग	ट	भ	यो	आ	—	–धो	—	——

संचारी

×			२		०		३		
गम	ग	रे॒	नि	सा	ग	म	म॑	म	—
क—	म	ल	वि	क	सि	त	भ	ये	—
ध	म॑	ध	सां	—	नि रे॒	नि	ध	म॑	म
च	—	क्र	वा	—	कि—	—	हँ	सी	—
सां	सां	सां	नि	ध	नि	ध	म	म	ग
सु	मु	खि	पु	ल	कि	त	ज	प	त
म॑	ग	रे॒	सां	निसा	ग	म	म॑	म	—
का	न	न	—	आ—	रा	—	ध्यो	—	—

आभोग "विश्वमोहन वदन" अंतरा मुजब, "ललित सुंदर" संचारी मुजब, 'कहे कृष्णदास' अंतरानुसार ।

राग ललित—ताल सूलताल

साँझजु आवनि कहि गये मोहन भोर भये देखें ।
गिनत नछत्र नेन अकुलाने चारि पहर मानो जुगते बिसेखे ॥१॥

कीनी भली जु चिह्न मिटाये अधरनि रंग उरे नख रेखे ।
'कुंभनदास'प्रभु रसिकसिरोमनि गिरिधर तुम्हारे ही कहा लेखे ॥२॥

स्थायी

×		०		२		३		०	
ग	रे॒	नि़	सा	ग	म	म॑	म॑	—	—
सां	—	झ	जु	आ	—	—	ब	—	नि
ग	ग	म॑	ध	म॑	ध	नि	सां	—	सां
क	हि	ग	ये	मो	—	—	ह	—	न
रें॒	सां	नि	ध	म॑	ध	म॑	म	ग	म॑म
मो	—	र	भ	ये	—	दे	—	खें	——

अंतरा

×		०		२		३		०	
म॑	ध	सां	सां	सां	—	नि	रें॒	सां॑	—
गि	—	न	त	न	—	छ	—	त्र	—
नि	रें॒	गं	रें॒	सां	सां	रें॒	नि	ध	—
ने	ऽ	न	ऽ	अ	कु	ला	—	नि	—
सां	नि	ध	म॑	म	ग	म॑	ध	सां	—
चा	—	र	प	ह	र	मा	—	नो	—
सां	रें॒	नि	ध	म॑	ध	म॑	म	ग	म॑म
जु	ग	तें	—	बि	से	ऽ	ऽ	खे	ऽऽ

संचारी

×		०		२		३		०	
म	—	म	म̍	म	ग	म	—	—	—
की	—	नी	भ	ली	जु	—	—	—	—
नि	ध	म̍	म	ग	रे̲	ग	—	—	—
चि	—	ह्न	मि	टा	—	ये	—	—	—
म̍	ग	रे̲	सा	नि	रे̲	ग	—	—	म
अ	ध	र	नि	रं	—	ग	—	—	कि
म̍	ध	नि	ध	म̍	म	म	रे̲	ग	—
ये̍	—	न	ख	रे	—	ख	—		—

"आभोग" अंतरानुसार ।

राग ललित—ताल धमार

अहो हरि होरी में जब जो गये तुम भाज ।
गारी देहूँ भरूँ भराऊँ, मुख माँडौंगी आज ॥१॥
हों अपनो मन भायो करिहों, सुन कुंवर ब्रजराज ।
'जगन्नाथ कविराय' के प्रभु माई, सकल घोख सिरताज ॥२॥

स्थायी

३				×					२		०		
नि̣	रे̲	ग	म	म̍	—	—	म	—	ग	—	ध	म̍	ध
अ	हो	ह	रि	हो	—	—	री	—	में	—	ज	व	—

सा — — सा	रे सां — नि ध	म ध	मं म ग
जो — — ग	ये — — तु म	भा —	— — ज

अंतरा

×	२	०	३
ध म ध सां —	सां सां	रें सां सां	नि ध म ध
गा — री दे —	हूँ भ	रुँ — भ	रा — उँ —
निं रें सां नि ध	म ध	मं म ग	नि़ रें ग म
मु ख माँ डो गी	— आ	— ज —	अ हो ह रि

संचारी

×	२	०	३
म म मं म ग	म ध	नि ध म	ग रे ग —
हो अ प नो —	म न	भा — यौ	क रि हों —
मं ग रे नि़ सा़	ग म	म — म	— — म —
सु न कुँ व र	ब्र ज	रा — —	— — — ज

‘आभोग’ अंतरानुसार ।

राग ललित पंचम

यह राग भैरव थाटमेंसे उत्पन्न होने वाला एक मिश्र राग माना जाता है । आरोह में पंचम वर्ज्य है । अवरोह पूर्ण एवं वक्र है । इस राग में दोनों मध्यमों का प्रयोग होता है । वादी स्वर शुद्ध मध्यम और संवादी षड्ज है । समय रात्रि का अन्तिम प्रहर है । यह राग ललितांग से

गाया जाता है । मुक्त मध्यम से ललित का उद्भव होता है किन्तु साथ में पंचम स्वर का अवरोह में प्रयोग होने से ललित से यह स्वतंत्र दिखाई देता है । प्रचलित ललित पंचम से सम्प्रदाय की भिन्न परम्परा प्राप्त न होने से पं. भातखंडेजी के मतानुसार यह प्रकार मान्य करना यहाँ उचित समझा है.

उठाव :– गमगरेसा, निसागम, मग, प, मधनि, धप, धमम, पग, रेसा.

राग ललित पंचम–ताल त्रिताल

कहो तुम सांचि कहाँतें आये भोर भये नंदलाल ।
पीक कपोलन लागि रही हे घूमत नेन बिसाल ॥२॥
लटपटी पाग अटपटे पेचन उरसि मरगजी माल ।
'कृष्णदास'प्रभु रसबस करि लीने धन्य वे हें व्रजबाल ॥२॥

स्थायी

०	३	×	२
प ग रे सा	नि सा ग म	म – म –	म गम ग –
क हो तु म	सां – चि क	हाँ – तें –	आ – ये –
– प प प	म ध रें नि	सां निध प म	ग म ग रे
क हो तु म	सां – चि क	हाँ – तें –	आ – ये –

अंतरा

०	३	×	२
प – ग ग	म – ध मध	सां – सां सां	नि रें सां –
पी – क क	पो – ल न–	ला – गि र	ही – हे –

सां — सां सां	नि ध ध सां	रे निध प म	ग म ग रें
धू — म त	ने — न बि	सा —— — —	— — — ल

संचारी

०	३	×	२
प प प म	ध ध ध प	प प म म	ग म ग ग
ल ट प टी	— पा — ग	अ ट प टे	पे — च न
प ग रे सा	नि सा ग म	म — म —	ग म ग —
उ र सो हे	म र ग जी	मा — — —	— — ल —

आभोग

०	३	×	२
प म ध सां	— सां सां सां	नि रें गं मंमं	गं रें सां सां
कृ — ष्ण दा	— स प्र भु	र स ब स—	क रि ली ने
सां सां नि ध	म ध सां सां	रें निध प म	ग म ग रे
ध नि वे —	हैं — ब्र ज	बा —— — —	— — — ल

राग पंचम

यह राग ग्रन्थोक्त एवं प्राचीन है। थाट मारवा है। समय रात्रि का उत्तर भाग माना जाता है। सम्मप्रदाय में यह राग सीतकाल में प्रातः काल मंगला-शृंगार समय तक तथा वसंत होरीके दिनोंमें गाया जाता है।

दोनों मध्यमों का प्रयोग होता है। जाति औडव-षाडव है। पंचम स्वर वर्ज्य है। संपूर्ण जाति का भी एक प्रकार प्रचार में है। रे स्वर आरोह में

बर्ज्य है और अवरोह में दुर्बल रूप से लिया जाता है। ललितांग से यह राग गाया जाता है। वादी स्वर मध्यम, संवादी षड्ज है।

आरोहावरोह :–साग, म, ग, मधनि, मध, सां। सांनिध, मग, रेसा.

विस्तार :– (१) साग, मधसां, निध, मध, निमध, सांनिध, मग रेसा.
(२) निसाम, म, मग, मधसां, निधनिमध, मग, मगरेसा.
(३) मध, सां, सां, सांनिधम, मग, मधनिधममग,
मम, रेसा, साम, ग, निधमग, मधनिमधसां.

राग पंचम–ताल धमार

देखो–देखो ब्रजकी वीथनि–वीथनि खेलत हैं हरि होरी।
गति विचित्र कोलाहाल कौतिक संग सखा लखकोरी ॥१॥
आईं झूमि झूमि झुंडन जुरी अगनित गोकुल गोरी।
तिनमें जुवतिकदंबसिरोमनि राधा नवलकिसोरी ॥२॥
छिरकत ग्वाल बाल अबलन पर बूका वंदन रोरी।
अरुन आकास देखि संध्या भ्रम मुनिमनसा भई बोरी ॥३॥
रपटत चरन कीच अरगजाकी केसरि कुंकुम घोरी।
कही न जाय 'गदाधर' पें कछु बुद्धिबल मति भई घोरी ॥४॥

स्थायी

×					२		०			३			
सां	–	नि	ध	म	ग	–	म	ग	म	ग	रे	सा	सा
दे	–	खो	ब्र	ज	की	–	बी	थ	नि	वी	–	थ	नि
सा	म	म	म	ग	म	ध	निध	म	ग	रे	सा	म	ध
खे	ल	त	हैं	–	ह	रि	हो–	–	–	री	–	दे	खो

अंतरा

×					२		०			३			
म॑	ध	सां	सां	–	सां	सां	सां	सां	सां	रें̲	सां	सां	सां
ग	ति	वि	चि	–	त्र	को	ला	ह	ल	को	–	ति	क
सां	नि	ध	म॑	ग	म॑	ध	सां	नि	ध	म॑	ग	म॑	ध
सं	ग	स	खा	–	ल	ख	को	–	–	री	–	दे	खो

संचारी

×					२		०			३			
सा	म	म	म	म	म	म	म	ग	ग	म॑	ध	सां	सां
आ	–	इ	झू	मि	झू	मि	झुं	ड	नि	जु	रि	जु	रि
म॑ध	सां	सां	नि	ध	म॑	ग	ग	–	म॑	ग	–	सा	–
अग	नि	त	गो	–	कु	ल	नो	–	–	री	–	–	–

राग मालकौंस

मालकौंस राग प्राचीन है। ग्रथों में 'मालवकौशिक' नाम से इसका उल्लेख दिखाई देता है। प्राचीन मान्यता अनुसार कहा गया है कि इस राग के गाने से पत्थर भी पिघल जाता है। ऐसा कुछ भी हो, परन्तु यह राग उष्ण प्रकृति का है। राग होने से पुष्टिभक्तिमार्ग के मन्दिरों में शिशिर और हेमंत ऋतुओं में अधिकतर मंगला के दर्शन में गाया जाता है। यह राग अधिकांश प्रबोधिनी से वसंतपंचमी तक ही गाया जाता है। इस राग में खंडिता (नायिका) के भाव के पद अधिक संख्या में हैं। काव्य का अर्थभाव, समय और शीतल ऋतु के साथ गहरा संबध होने के कारण पुष्टिमार्ग के मन्दिरों में यह राग

दृष्टिगोचर होता है। इस राग में बधाई और जन्मोत्सव इत्यादि के पद प्राप्त नहीं होते। अतः यह राग गाने की प्रणाली नहीं है। गंभीर प्रकृति का यह राग अति लोकप्रिय है। विवरण इस प्रकार है।

१. यह राग भैरवी थाट से उत्पन्न होता है।
२. इस राग में ऋषभ पंचम वर्ज्य होने से जाति औडय है।
३. वादी स्वर मध्यम है और संवादी षड्ज है।
४. समय रात्रि का तीसरा प्रहर माना जाता है। आरोह अवरोह स्वरूप

नि सा, ग म, ध नि सा। सा निध मग म ग सा

पकड़ : म ग, म ध, नि ध, म ग सा

राग मालकौंस—ताल मत्तताल, मात्रा १८

चंद कमल पर भँवर दोऊ बेठे, चंद गयो है लजाई (माई)।
कला बिमल भई, छिप गई जोति, उडुगन गगन लगे हे जाई ॥१॥
बेंनी निरखत भुजंग पाताल गये, दृग देख मीन जल में दूरे जाय।
छिनक केहरि कटि, "घौंघी" के प्रभु निहार, बारं—बार बलि—बलि जाय ॥२॥

स्थायी

×	०	२	३	०	४	५	६	०
सां —	ध नि	ध म	ग म	— म	ग सा	ध नि	सा —	म —
चं —	द क	म ल	प र	— भँ	व र	दो ऊ	बे —	ठे —
म							म	ग सा
ग —	म म	नि ध	नि सां	— गं	सां नि	ध म	ग म	ध नि
चं —	द ग	यो —	हे —	— ल	जा —	ई —	मा —	ई —

अंतरा

×	०	२	३	०	४	५	६	०	
ग	म–	निध	नि–	सांसां	–सां	गंसां	निध	निध	म
क	ला–	विम	ल–	मई	–छि	पग	ईजा	–ति	–
ध	निसां	मंगं	–गं	–सां	सांनि	–ध	मग	मग	सा
उ	डुग	नग	गन	––	लगे	–है	–जा	–ई	–

संचारी

×	०	२	३	०	४	५	६	०	
म	–म	धम	गम	मध	–नि	निध	निध	मम	–
वें	–नी	निर	खत	भुजं	–ग	पाता	–ल	गये	–
ध	मग	मग	सा–	साध	निसा	–म	ग–	म–	म
ह	गदे	–खि	सी–	नज	लमें	–दू	रैं–	जा–	य

आभोग

×	०	२	३	०	४	५	६	०	
ग	गम	मध	धनि	निनि	सां–	सांगं	सांनि	निध	म
छि	नक	केह	रिक	टिधों	धी–	केप्र	मुनि	हा–	र
ध	–नि	सांसां	–मं	–गं	–सां	निध	मग	मध	नि
बा	–रं	–बा	–र	–ब	–लि	ब–	लिजा	–य	–

राग मालकौंस–ताल चौताल

पीर न जानी अहो पिय, देखि तिहारी एसी अनोखी प्रीत ।
हंमसों अवधि बदी, अनत बिलम रहे, कोन गाँव की यह रीत ॥१॥

तारे गिनत मोहि चार जुग बीते, कोन के भवननि सिधारे हो मीत ।
'तानसेन' के प्रभु अब न पत्याऊँ, तुमें करि राखों रसरीत ।।२।।

स्थायी

							सां	ध	नि	ध	मग
							पी	—	र	—	न—
×		०		२		०		३		४	
म	—	—	म ग	—	म	ग	सा	—	सा	म	म
जा	—	—	नी	—	अ	हो	—	—	पि	—	य
म ग	—	—	म	ध	नि	सां	—	नि	सां	—	सां
दे	—	—	खि	—	ति	हा	—	री	ए	—	सी
गं	सां	नि	ध	नि	ध	म	सां	—	ध	नि	ध
अ	ना	खी	प्री	—	त	—	पी	—	र	—	न

अंतरा

×		०		२		०		३		४	
ग	म	—	ध	—	नि	नि	सां	—	सां	सां	—
ह	म	—	सों	—	अ	व	धि	—	ब	दी	—
नि	नि	—	सां	—	गं	सां	नि	नि	ध	म	—
अ	न	—	त	—	बि	ल	म	—	र	हे	—

नि	सां	—	मं	—	गं	मं	गं	—	सां	—	—
को	—	—	न	—	गाँ	—	व	—	को	—	—
गं	सां	—	ध	नि	ध	म	सां	—	ध	नि	ध
य	ह	—	री	—	त	—	पी	—	र	—	न

संचारी

×		०		२		०		३		४	
सां	—	—	म	—	म	ध	म	—	म	—	म
ता	—	—	रे	—	गि	न	त	—	मो	—	हि
ग	—	ग	म	ध	नि	ध	नि	ध	म	—	—
चा	—	र	जु	—	ग	बी	—	—	ते	—	—
ग	—	—	म	—	म	ग	म	ग	सा	—	सा
को	—	—	न	—	के	भ	व	—	न	—	नि
सां	ध̣	नि̣	सा	—	सा	ग	सा	म	म	—	—
सि	धा	—	रे	—	हो	मी	—	—	त	—	—

'आभोग' अंतरानुसार।

(इस राग के अधिक पदों की स्वरलिपि के लिए हमारे "संगीतकीर्तन-पद्धति" एवं "संगीतसुबोधिनी" देखिये)

राग मालकौंस—ताल चर्चरी (झपतालअंग)

नख कहाँ लागे बन बानरा लगाये नख,
चख क्यों राते प्रात देख्यो ताते भान को।

चंदन लग्यो हे कहाँ, विघ्नहरन पूजा कीनी,
बंदन लग्यो है कहाँ, परस भयो थान को ।।२।।
रेन रहे कहाँ नट नृत्य जहाँ,
अरवरे क्यों बोलो मोसों डर भयो आन को ।
गुजरी सो गुजरी अब आगे आय ठाडे "सूरु",
थैंगरी कहाँलों देत फाटे असमान को ।।२।।

स्थायी

×		२			०		३		
सा	सा	निसा	ध	नि	सा	म	म	म	ग
न	ख	क—	हाँ	—	ला	—	गे	व	न
म	ग	म	ध	नि	सां	ध	नि	ध	म
वा	न	रा	—	ल	गा	ये	न	—	ख
म	ग	म	नि	ध	नि	सां	सां	—	सां
च	ख	क्यों	—	रा	—	ते	प्रा	—	त
गं	सां	निध	मध	नि	ध	नि	ध	मग	म
दे	ख्यो	ता—	——	ते	भा	—	न	को—	—

अंतरा

×		२			०		३		
म	ग	म	निध	नि	सां	सां	सां	सां	—
चं	द	न	——	ल	ग्यो	हे	क	हाँ	—

सां	सां	सां	गं	सां	निध :	नि	ध	म	म
बि	घ्न	ह	र	न	—	पूजा	की	—	नी
ध	ध	नि	सां	मं	गं	मं	गं	सां	सां
बं	द	न	—	ल	ग्यो	हे	क	हाँ	—
गं	सां	निध	मध	नि	ध	नि	ध	मग	म
प	र	स—	भ—	यो	था	—	न	को—	—

संचारी

×		२			०		३		
ग	म	ध	नि	सां	गं	सां	नि	ध	म
रे	—	न	—	र	है	—	क	हाँ	—
सां	—	नि	—	सां	गं	सां	निध	नि	ध
न	—	ट	—	नृ	—	त्य	ज—	—	हाँ
म	ग	म	ध	नि	सां	ध	नि	ध	म
अ	र	ब	रे	क्यों	बो	लो	मो	—	सों
ग	सा	सा	ध़	नि़	सा	म	ग	मग	म
ह	र	भ	—	यो	आ	—	न	को—	—

आभोग

×		२			०		३		
ग	म	ध	—	नि	सां	सां	सां	सां	सां
गु	ज	री	—	सो	गु	ज	री	अ	ब
सां	सां	सां	—	निसां	गं	सांनि	नि	—	ध
आ	गे	आ	—	य-	ठा	डे-	सू	—	र
ध	नि	सां	मं	मं	गं	गंमं	गं	—	सां
थें	ग	री	—	क	हाँ	लों-	दे	—	त
सां	सां	सांनि	ध	नि	ध	नि	ध	मग	म
फा	टे	अ-	—	स	मा	—	न	को-	—

राग देवगंधार

देवगंधार राग प्राचीन है । प्रचार में यह राग आसावरी थाट का माना जाता है परन्तु पुष्टिसम्प्रदायकी कीर्तनप्रणाली अनुसार यह राग का थाट भैरव माना जायगा । अतः गानसमय दिनका प्रथम प्रहर है । सम्प्रदाय की प्रातः-कालीन सेवामें यह राग शृंगार के दर्शन तक गाया जा सकता है । सम्प्रदाय के मुख्यत : रागों मे यह राग है । नित्यकीर्तन, जन्मबधाई तथा त्यौहारादि के कीर्तनों में भी यह राग के पद अधिकतर पाये जाते हैं ।

वादी स्वर धैवत और संवादी ऋषभ माना जायगा । जाति सम्पूर्ण है । स्वर रिषभ धैवत कोमल है तथा इस राग के अवरोह में निषाद कोमल तथा शुद्ध ऋषभ केवल तार सप्तक में रंजक होता है । रे कोमल शुद्ध रे की ओर जुकता सा रहता है ।

आरोहावरोह—

सा, रे, गं, म, प, ध, निसां। सांनिधप, निधप, मग, रे, सां.

चलत : (१) सां, सां, नि, ध, पध, सां, निध, प, मप, मग, रे, सा.

(२) मम, , प, ध, ध प, म ध, सां, सां नि ध प, रें सां नि ध प,
मप, मगरे, सा

(३) ध ध म ध, सां, नि ध, रें सां, रें नि ध, प, म, प, ध प,
म, गम, रे, सा.

राग देवगंधार—ताल आडचौताल (तीव्रा)

आजु बधाई मंगल चार ।
गावत मंगल गीत जुवतिजन, नवसत साज सिंगार ।।१।।
मंगल कनक कलस सुभ मंगल, बांधे बंदनवार ।
मंगल मोतिन चोक पुराये, पंचशब्द गृहद्वार ।।२।।
घर घर मंगल महा महोत्सव, श्रीवल्लभ अवतार ।।
'हरजीवन'प्रभु यज्ञपुरुष श्रीलछमनभूप—कुमार ।।२।।

स्थायी

										म	ग	म	पध
										आ	ऽ	जु	बऽ
×	२		३		४		×	२		३		४	
सां	–	सां	ध	प	पध	रें	सां	–	सां	ध	प	गम	प
धा	ऽ	ई	मं	ऽ	गऽ	ल	चा	ऽ	र	आ	ऽ	जुऽ	ब
नि	–	ध	पम	गरे	गम	प	मग	रे	सां	म	गम	प	पध
धा	ऽ	ई	मंऽ	ऽऽ	गऽ	ल	चाऽ	ऽ	र	आ	ऽऽ	जु	बऽ

अंतरा

× २ ३ ४ × २ ३ ४
म म गम | प धसां | सां | रें रें सांरें | गं रें | सां सां
गा ब तऽ | मैं ऽग | ल | गी त जुऽ | व ति | ज न
निसां सां सां | ध पपध | धरें | सां — सां | निध पम | गम प
नव स त | सा ऽज— | सिंऽ | गा ऽ र | आऽ ऽऽ | जुऽ ब

संचारी

× २ ३ ४ × २ ३ ४
सां सां सां | ध ध | प प | ध ध धप | ग म | प प
मं ग ल | क न | क क | ल स सुभ | मं ऽ | ग ल
नि — ध | पम ग | म प | म — — | — — | सा —
वां ऽ धि | बंऽ ऽ | द न | बा ऽ ऽ | ऽ ऽ | र ऽ

आभोग

× २ ३ ४ × २ ३ ४
म म म | प ध | सां सां | सां रें गंमं मं | रें रें | सां —
मं ग ल | मो ऽ | ति न | चोऽ कऽ पु | रा ऽ | ये ऽ
सांरें रें नि | ध प | प प | धसां — सां | ध प | गम प
पंऽ च स | ऽ ऽदगृ | हऽ | द्वा ऽ र | आ ऽ | जुऽ ब

राग देवगंधार—ताल धमार

अद्‌भुत डोल बनी मनमोहन अद्‌भुत डोल बनी ।
तुम झूलो हौं हरखि झुलाऊँ, वृंदावनचँद धनी ॥१॥
परम विचित्र रच्यो विश्वकर्मा हीरालाल मनी ।
'चत्रभुज'प्रभु गिरिधरनलाल-छबि का पे जात गनी ॥२॥

स्थायी

×					२		०			३			
सां	—	—	सां	—	सां	—	नि	ध	—	प	—	ध	रे
अ	ऽ	ऽ	द्भु	ऽ	त	ऽ	डो	ऽ	ऽ	ल	ऽ	ऽ	ब
सां	—	—	नि	ध	प	—	म	—	—	प	—	प	—
नी	ऽ	ऽ	म	ऽ	न	ऽ	मो	ऽ	ऽ	ह	ऽ	न	ऽ
नि	ध	—	ध	—	प	—	ध	प	म	ग	—	प	म
अ	ऽ	ऽ	द्भु	ऽ	त	ऽ	डो	ऽ	ऽ	ल	ऽ	ऽ	ब
ग	—	—	म	—	ग	—	रे	—	—	सा	—	—	—
नी	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ

अंतरा

×					२		०			३			
म	म	—	म	—	प	—	ध	—	—	सां	—	—	—
तु	म	ऽ	झू	ऽ	ऽ	ऽ	लो	ऽ	ऽ	हौं	ऽ	ऽ	ऽ
सां	रें	—	रें	—	रें	—	गं	रें	—	सां	—	सां	ऽ
ह	र	ऽ	खि	ऽ	झु	ऽ	ला	ऽ	ऽ	ऊँ	ऽ	वृं	ऽ

सां	—	—	सां	—	सां	—	नि	$\underline{\text{ध}}$	—	प	$\underline{\text{ध}}$	$\underline{\text{ध}}$	$\underline{\text{रें}}$
दा	ऽ	ऽ	ब	ऽ	न	ऽ	चं	ऽ	ऽ	द	ऽ	ध	ऽ
सां	नि	—	$\underline{\text{ध}}$	—	प	—	म	—	—	प	—	प	—
नी	ऽ	ऽ	म	ऽ	न	ऽ	मो	ऽ	ऽ	ह	ऽ	न	ऽ

राग हिंडोल

यह प्राचीन राग है। हनुमन्मतानुसार मूल छः रागों में हिंडोल को तीसरा राग बताया है ! ग्रन्थों में हिंडोल के स्वरों में कुछ मतभेद दिखाई देता है किन्तु रि प वर्ज्य के लिये अधिक मतभेद नहीं है। 'संगीतपारिजात[१] तथा 'संगीतसारामृत'[२] इत्यादि ग्रन्थों में रि प वर्ज्य का स्पष्ट उल्लेख है। प्रचार में अष्टछापघराना में तथा भारतीय संगीत के अन्य घरानों में हिंडोल के स्वरूप में कोई भिन्नता नहीं है। अतः लक्ष्यसंगीतकार ने किया हुआ हिंडोल का सर्वसम्मत वर्णन इस प्रकार है।[३]

"हिंडोल राग कल्याण थाट से उत्पन्न होता है। प्रातःकाल में गाया जाता है। वादी स्वर धैवत और संवादी गांधार है। रि प स्वर वर्ज्य हैं। अवरोही वर्ण में अधिक वैचित्र्य दिखाई देता है।

अष्टछाप के श्रीकृष्णदासजी ने भी हिंडोल की एक पदरचना में भी यही वर्णन किया पाया जाता है। यह पद और उसकी स्वरलिपि यहाँ प्रसिद्ध की जा रही है।

---

[१] "हिन्दोलेऽथ रिपौ त्याज्यौ, कोमलो धैबतो भवेत्। ४३०॥

[२] "हिन्दोलो भैरवीमेलसंजातो रिपवर्जितः।
औडवः सर्वदा गेयः संगीतागमकोविदैः॥
[संगीतसारामृत. पृ. २३. प्रका० सन् १९११]

[३] लक्ष्यसंगीत–पृ. ९० [प्रकाशन–ई० १९२४]

अष्टछाप परंपरा में यह राग वसंतोत्सब के दिनों में गाया जाता है । बंगाल के प्रसिद्ध ग्रन्थकार ने इस बात का समर्थन इस प्रकार किया है[४] "हिंडोल राग संस्कृत ग्रन्थ का ही हिंडोल राग है । वह औडवजाति का है । रिषभ पंचम वर्ज्य हैं । इस राग को वसन्त ऋतु की 'दोलयात्रा' के महोत्सवप्रसंग में गाने की प्रथा है[५] । सन्प्रदाय में प्रातःकालीन एवं खंडिता की भावना इत्यादि के पद उसी हिंडोल राग में गाये जाते हैं । जिस का विवरण निम्न प्रकार है ।

वादी स्वर–धैवत, संवादी–गान्धार. थाट—कल्याण

गानसमय–दिन का प्रथम प्रहर, जाति–औडव

स्वर–म तीव्र, अन्य शुद्ध, नि बक्र, वर्ज्यस्वर–रे और प

आरोहावरोह :

सा, ग, म॑धनिध, सां । सां, निध, म॑ग, सा.

पकड–स्वर–सा, ग, म॑ध, निध, म॑ग, सा.

स्वरविस्तार :

१. सा, ग, म॑ग, ध, म॑ग, म॑धनिध म॑ग, म॑ग सा.

२. सा, धसा, म॑धसा, ग, सा. सागम॑गसा, ध, म॑ग, सा.

३. साध, निम॑ध, सांध, म॑धम॑सां, ध, म॑गं, सां, ध, निधम॑ग, म॑ग, सा.

---

[४] भातखंडे संगीतशास्त्र–भाग–१

[५] दोलोत्सव (डोल) के वसंत समय झूलन के पदों में तथा चातुर्मास में हिंडोला (झूला) के दिनो में गाये जाने वाछा हिंडोलप्रकार–२ का विवरण इस राग के साथ ही पीछे दिया गया है ।

४. सांध, मग, सा. गंसां; धम, ग; सा. मग, सा, धम, मग, सा.

५. सां, धसां, मधमसां, मगं, सां–गमधम धसां, ध, ध, निमध, सां. सांध, धम, मग, गसा. ध, सा।

इस प्रकार के हिंडोल राग के पदों में से नृत्य के भाव के दो पद उदाहरण के लिये स्वरलिपिसहित यहाँ दिये जा रहे हैं। प्रथम हैं टिपारे के शृंगार का और दूसरे में मुकुट-काछनी शृंगार का सुंदर वर्णन किया है।

राग हिंडोल-ताल चर्चरी

थेई ता थेई थेई करत निर्तत नटवरलाल गावत हिंडोल रस रंग रह्यो भारी।
मुरलिका अधर धरी बजावत संगीत सों, नाद सुनि विवस हो चली व्रजनारी ॥१॥
आप ठाडी भई लालके ढिंग, पाठके गुलाल कछु मोहन पें डारी।
काछिनी खुलि गई चंद्रिका लटकि कें मदनमोहन की लेत बलिहारी ॥२॥

स्थायी

×			२		०		३		
सां	सां	सांध	सांम	ध	सां	ध	म	ग	सा
थे	ई	ताऽ	थे	ई	थे	ई	क	र	त
सा	सा	ध	सा	सा	ग	म	ग	—	सा
निर्तं	—	त	न	ट	व	र	ला	—	ल

सा	सा	ग	म॑	ग	म॑	ध	सां	सां	सां
गा	व	त	—	हिं	डो	—	ल	र	स
गं	—	सां	सां	नि	ध	म॑	ग	—	सा
रं	—	ग	र	द्यो	मा	—	री	—	—

अंतरा

×			२		०		३		
म॑	ध	ध	सां	—	सां	सां	सां	सां	सां
मु	र	लि	का	—	अ	ध	र	ध	रि
सां	ध	सां	गं	गं	मं॑	गं	सां	सां	ध
व	जा	व	त	सं	गी	—	त	सौं	—
मं॑	—	गं	म॑	गं	गं	सां	सां	सां	सां
ना	—	द	सु	—	नि	—	बि	ब	स
सां	—	सांध	सांम॑	ध	नि	ध	म॑	ग	सा
हो	—	च–	ली–	—	ब्र	ज	ना	—	री

राग हिंडोल–ताल चौताल

निरतत गावत बजावत सासा गग मग मध निध मध औडव सुर राग हिंडोल । ध्रिगडधिंग, ध्रिगडध्रिंग, घररर कूहु कूहु कूहु धिधिकिट बाजत मृदंग बोल ॥१॥ सोहे टिपारो लाल काछिनी कमलवरन, खेलत बसंत राधा करत कलोल । केलि करत वृंदाबन 'मदनमोहन' जमुनातट बारत हैं मुक्तामनिमाल अमोल ॥२॥

स्थायी

							सां	ध	नि	म॑	ध
							नि	र	त	—	त
×		०		२		०		३		४	
सां	—	ध	म॑	—	ध	नि	ध	म॑	ग	—	सा
गा	—	—	व	—	त	ब	जा	—	व	—	त
सा	—	सा	ग	—	ग	म॑	ग	—	म॑	—	ध
नि	ध	—	म॑	—	ध	सां	—	गं	सां	म॑	ध
						औ	—	ड	व	सु	र
नि	ध	म॑	ग	—	सां	—	सां	ध	नि	म॑	ध
रा	ग	हिं	डो	—	ल	—	नि	र	त	—	त

अंतरा

×		०		२		०		३		४	
म॑	ग	ग	म॑	—	ध	सां	सां	सां	सां	—	सां
ध्रि	ग	ड	ध्रि	—	ग	ध्रि	ग	ड	ध्रि	—	ग
सां	सां	गं	गं	सां	सां	सां	—	सां	सां	—	ध
घ	र	र	र	कू	हु	कू	—	हु	कू	—	हु
सां	सां	गं	गं	म॑ं	म॑ं	गं	ग	सां	—	ध	ध
धि	धि	कि	ट	धि	धि	कि	ट	बा	—	ज	त
सां	ध	म॑	ग	—	सा	—	सां	ध	नि	म॑	ध
मृ	दं	ग	बो	—	ल	—	नि	र	त	—	त

संचारी

×		०		२		०		३		४	
सा	—	ध	ध	—	ध	नि	ध	म॑	ध	—	ध
सो	—	—	हे	—	टि	पा	—	रो	ला	—	ल
म॑	ध	साँ	सां	—	ध	नि	ध	नि	ध	म॑	ग
का	—	छि	नी	—	क	म	ल	—	ब	र	न
ध	—	म॑	ग	—	म॑	ग	—	सा	सा	—	सा
खे	—	ल	त	—	ब	सं	—	त	रा	—	धा
सा	ध	—	म॑	—	ध	सा	—	—	ग	—	सा
क	र	—	त	—	क	लो	—	—	—	—	ल

आभोग

×		०		२		०		३		४	
म॑	—	ग	ग	म॑	ध	सां	—	सां	सां	—	सां
के	—	लि	क	र	त	वृं	—	दा	ब	—	न
सां	सां	गं	—	सां	सां	सां	सां	सां	सां	ध	ध
ज	मु	ना	—	त	ठ	म	द	न	मो	ह	न
सां	—	गं	मं॑	मं॑	गं	मं॑	सां	सां	ध	म॑	ध
बा	—	र	त	है	—	मु	—	क्ता	म	—	नि
नि	ध	म॑	ग	—	सां	—	सां	ध	नि	म॑	ध
मा	ल	अ	मो	—	ल	—	नि	र	त	—	त

राग हिंडोल–प्रकार २

सम्पदाय में दोलात्सव के तथा हिंडोला के पदों में इस प्रकार का हिंडोल प्रचलित होने का असंभवित नहीं हैं । किन्तु आजकल यह प्रकार अप्रचलित दिखाई देता है । जिस प्रकार मल्हार राग गानेका फल बरसात होना सुप्रसिद्ध है, उस प्रकार हिंडोल का फल "झूले हिंडोला आपते' गावत राग हिंडोल" कहा गया है । अर्थात् इस राग गाने से झूला अपने आप झूलने लगता है । सम्प्रदायमें [१]दोलोत्सव के पदों में तथा [२]हिंडोलके पदोमें हिंडोल का उल्लेख जो प्राप्त होता हैं, यह हिंडोल–प्रकार २ का सूचन है ।

इसके पूर्व हिंडोल का जो वर्णन हम कर चुके हैं, वह उत्तरांग अंगका है । वह दिनके बारह बजे पूर्व गाया जाता है । किन्तु यह हिंडोल का पूर्वांग अंग होने से दूपहर के बारह बजे से पश्चात् गाने का समय है ।

इस प्रकार के हिंडोल को कोई सांझ का हिंडोल कहते हैं । सम्प्रदाय में 'दोल' का तथा हिंडोला का समय दिन का चौथा प्रहर सुप्रसिद्ध है । अतः इनको सायंकालीन हिंडोल कहना समुचित्त कहा जायगा । प्रातर्गेय हिंडोल में वादी स्वर धैवत और संवादी निषाद है । प्रातर्गेय हिंडोल में निषाद का प्रयोग जितना कम किया जाय उतना उस राग का सौन्दर्य बढ़ता है और वह भी अवरोह में ही किया जाता है । इसमें निषाद स्वर महत्त्व का है और आरोह अवरोह दोनों में प्रयोग किया जाता है । जोकि मन्द्र और मध्यसप्त की फिरत में निषाद का प्रयोग इतना अधिकतर नहीं होना चाहिए कि जिससे पूर्या राग की स्पष्ट छाया उत्पन्न हो । अन्य लोगोंका कहना है कि इसमें ऋषभ स्वर

---

[१] झूलत जुगकमनीय किसोर, सखी चहुं ओर झूलाव डोल ॥ × × ×
"उंची धुनि सुनि चक्रत होत मन, सब मिल गावत राग हिंडोल" ॥

[२] झूलत दोऊ नवल किसोर × × ×
"अबला अति सुकुमार डरपत, सुर हिंडोला झकोर" ॥

वर्ज्य होने से पूर्या अलग हो जाती है। सम्प्रदाय की परंपरा अनुसार देखा जाय तो इनमें मन्द्र और मध्य सप्तक में निषाद की इस प्रकार की फिरत होनी न चाहिए कि जिससे पूर्या की स्पष्ट:छाया उत्पन्न होती हो। केवल कुछ आभास उत्पन्न हो सकता है।

पं. आदितरामजी ने राग हिंडोल में "हिंडोरे झूलत व्रजपति" अपनी यह पदरचना प्रसिद्ध की है।[1] जिसकी पाद-टीप में किया हुआ निम्न उल्लेख से पूर्वांग-वादी हिंडोल का ही समर्थन होता है।

"यह राग षाडव-जाति का है और रिषभ व पंचम बाद है. मध्यम तीव्र लेना और सब शुद्ध हैं। निषाद और गांधार प्रधान सुर है। निषाद से ग्रह गांधार पे न्यास है"

अतः सम्प्रदायपरंपरा में दोलोत्सव के तथा हिंडोलाके उत्सवों में हिंडोल राग के जो पद गाये जाते होंगे वह हिंडोल का दूसरा प्रकार अर्थात् पूर्वांग का हिंडोल कहा जायगा। इस सायंगेय हिंडोल को ही अन्य गायक लोग सांझ का हिंडोल कहते हैं।

हिंडोला-प्रकार २ का संक्षिप्त वर्णन

आरोहावरोह :-

सा, ग, म, ध, नि, सां | सां, नि, ध, म, ग, सा.

पकड :- सा, ग, सा, नि ध, म ध नि सा।

स्वरविस्तार :

(१) सा, ग, निसाग, मधनिसाग, मग, मध, मग, ग, सा.

(२) सा, मधसा, निधनिसा, ग, मधनिध, मग, मधनिसां,

---

[1] संगीतादित्य, पृष्ठ-५९

निध, म॑ग, सा, ध़ऩिसा, ग.

(३) सा, ग, म॑ध, नि, म॑ध, सां, म॑धनिसां, गं, सां, मं॑गं, सां,

निध, म॑ग, सा, निध़नि, म॑ध, सा.

राग हिंडोल (प्र. २) + स्वरमालिका

स्थायी

०	३	×	२
ग – सा –	ध – नि सा	ग – – –	– – म॑ ध
नि ध म॑ ग	म॑ ध नि सां	नि ध म॑ ग	नि ध – म॑
ग – सा –	ध – नि सा	ग – – –	– – सा –

अंतरा

०	३	×	२
म॑ म॑ ग म॑	म॑ ग म॑ ध	सां – – –	– – – –
गं – – –	सां – – –	ग – – –	सा – म॑ ध
नि ध म॑ ग	म॑ ध नि सां	नि ध म॑ ग	नि ध – म॑
ग – सा –	ध़ – ऩि सा	ग – – –	– – सा –

+ (अ) आजसे लगभग ६० वर्ष पूर्व पाटन में आई हुई रासमंडली के स्वामी मोहनलालजी एवं सुकदेवजी से लेखक ने इस सरगम को सिखा था। जिस समय सखी बनने वाला लडका बीमार हो जाने से कुछ दिनों तक सखी बनने का सौभाग्य मुझे भी प्राप्त हुआ था।

(ब) इस प्रकार में किसी कीर्तनकार से कीर्तन–पद सुना नहीं है अतः उदाहरण में उपर्युक्त सरगम प्रसिद्ध की गई है।

राग सूहा

सूहा राग ग्रन्थोक्त है । ग्रन्थों में देशी सुहा, सूहू इत्यादि नाम प्राप्त होते हैं । हवेली–संगीतपरंपरामें जो सूहा का विशिष्ट प्रकार पाया जाता है वह प्रचार के सूहा से कुछ भिन्न दिखाई देता है, जिसका विवरण इस प्रकार है ।

थाट काफी है । स्वर ग नि कोमल तथा शुद्ध निषाद का भी प्रयोग किया जाता है । ध वक्र एवं अवरोह में ग वक्र रहता है । यह रात्रि में गाये जाने वाला नायकी कानड़ेका दिन का प्रतिरूप कहा जाता है । वादी म एवं संवावी सा है । गानसमय दिन का दूसरा प्रहर माना जाता है । सांधनिप इस प्रकार धैवत का अल्प प्रयोग किया जाता है । जाति सम्पूर्ण है ।

हवेली-संगीत में यह राग चातुर्मास के प्रारम्भसमय यानि ज्येष्ठ शुक्ल १५ से रथयात्रा तक शृंगार दर्शन की सेवा तक गाया जाता है । सोरठ की माफिक सूहा भी वर्षा-आगम का राग माना जाता है । इसको कोई "सूहा–सुघराई" ऐसा संयुक्त नाम से भी पहचानते हैं । वृद्ध कीर्तनकारों से मेरी किशोरावस्था में "सूहा–बिलावल" का प्रकार भी सुना है । *

आरोह :— निसा, ग, म, प, निसां

अवरोह–सां, ध, निष, मप, ग, मरे, सा

राग सुहा-सुघराई—ताल-अर्ध आडा चौताल (प्राचीन चंपक ताल)

मदगजराज की सी चाल ।
भुजवर दंड सूंढकी सोभा हर लीनी नंदलाल ॥२॥
चलत कचकुंचित अनेक अंकुश से लटकत भाल ।

---

* यहां यह प्रकार भी दिया गया हैं । जिसकी परम्परा प्रचारमें अलभ्य हो रही हैं ।

चमर चारु अवतंस पंजरी मदकण श्रमजलजाल ॥२॥
मुरलीरव गुंजार सुनत ही कंपत चित-व्रजबाल ।
रिसरूसनो गदाधरयोंही वनवेली बेहाल ॥७॥

स्थायी

३		४		×	२	
नि	प	निम	प	नि	प	मप
म	द	ग–	ज	रा	–	ज–
प	ग	ग	गम	रे	–	सा
की	–	सी	——	चा	–	ल

अंतरा

३		४		×	२	
म	प	नि	प	नि	सां	सां
सु	ज	व	र	दं	–	ड
रें	–	नि	सां	निप	नि	प
सूं	–	ढ	कौं	सो–	–	भा
म	म	प	मप	सां	–	नि
ह	र	ली	——	नी	–	–
प	–	ग	गम	रे	–	सा
नं	–	–	द–	ला	–	ल

राग सुहा–सुघराई–ताल त्रिताल

कोनकी उपरनी ओढ आये हो, पिय्र सांचि कहो :मोसौं ।
अटपटी पाग लटपटे पेचन बिनगुन माल अधरन अंजन:लाये हो ॥१॥
जानत जिनकें दुराये चाहत हो छुपत नांहि छुपाये ।
अति चतुराई जिन करो माहन मोसौं कहो अव कोन त्रिया बिरमाये हो ॥२॥

स्थायी

०	३	×	२
— म — रे	प म नि प	सां — निप	म प — ग
— कौ — न	की उ प र	नी — — —	— ओ — ठि
म — रे सा	रे — सा सा	सा म म म	रे रे सा सा
आ — ये —	हो — पि य	सां — चि क	हो मो — सौं

अंतरा

×	२	०	३
म रे प प	— प नि मप	नि सां सां सां	रें — सां सां
अ ट प टी	— पा — ग—	ल ट प टे	पे — च न
निप पनि प ग	म रे — सा	सा सा म रे	प म नि प
बि— न— गु न	— सा — ल	अ ध र न	अं — ज न
सां — नि प	— ग म रे	सा म — रे	प म नि प
ला — — ये	— हो — —	— को — न	की उ प र

राग सुहा–सुघराई–ताल धमार

बरस उघरि गयो मेह टपकत पात दुमबेली ॥
झमकत झार नीर भरे देखियत, सोभा देखि सहेली ॥१॥

लाल मनावन तू नहीं मानत, तोसों प्रीति नवेली ।
''तानसेन'' के प्रभु तुम बहुनायक याहितें गर्वगहेली ॥२॥

स्थायी

३	×	२	०
ग गम रे सा	रे – सा – –	म प	पनि मप ग
ब रऽ स उ	घ ऽ र ऽ ऽ	ग यो	मेऽ ऽऽ ह
म म प प	नि प नि सां –	नि प	गम रे सा
ट प क त	पा ऽ ऽ त ऽ	टु म	बेऽ ऽ ली

अंतरा

×	२	०	३
म प – नि प	नि –	सां – –	सां – नि सां
झ म ऽ क ऽ	त ऽ	झा ऽ ऽ	र ऽ नी ऽ
गं मं – रें –	सां –	नि सां सां	नि – प –
र ऽ ऽ भ ऽ	रे ऽ	दे ऽ खि	य ऽ त ऽ
म प – सां –	– –	नि सां –	नि – प –
सो ऽ ऽ भा ऽ	ऽ ऽ	दे ऽ ऽ	खि ऽ स –
नि प – ग –	म –	रे सा –	रे रेग रे सा
हे ऽ ऽ ऽ ऽ	ऽ ऽ	ली ऽ ऽ	ब रऽ स ऽ

संचारी

×					२		०			३			
ध	—	—	ध	—	नि	प	प	—	—	प	म	प	—
ला	ऽ	ऽ	ल	ऽ	ऽ	म	ना	ऽ	ऽ	ब	ऽ	त	ऽ
सां	—	—	सां	—	सां	—	नि	सां	—	नि	—	प	—
तू	ऽ	ऽ	न	ऽ	हीं	ऽ	मो	ऽ	ऽ	न	ऽ	त	ऽ
नि	प	—	ग	—	म	—	रे	—	—	सा	—	रे	—
तो	ऽ	ऽ	सों	ऽ	ऽ	ऽ	श्री	ऽ	ऽ	त	ऽ	न	ऽ
ग	—	—	म	—	रे	—	नि	सा	—	—	—	—	—
वे	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ली	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ

'आभोग' अंतरानुसार ॥

राग-सुहा—सुघराई—ताल धमार

जानी मै आज तू मिली प्यारे सें अपनो भामत्तो हरि किये ।
सकल रेन रतिरंग रसभरे खेलत [1]पलकसों पलक नां लागनि दियो ॥१॥
कठ लगाय भुज है सिरहाने रसिक लालको अधररस पियो ।
कुंभनदास-प्रभु गिरिवरधर को अंग भरि भेंटि जुडायो हियो ॥२॥

स्थायी

३				×					२		०		
नि	प	ग	म	प	सां	—	नि	प	सां	—	नि	सां	—
जा	नी	में	—	आ	—	—	ज	—	तू	—	मि	ली	—

---

[1] पाठांतर—पलकु पल-पल लागन दियो ।

नि – प –	ग ग – ग म	रे सा	रे सा –
प्या – रे –	सों – – अ –	प –	नो – –
म – म –	$\overset{\text{म}}{\text{प}}$ – – $\overset{\text{प}}{\text{नि}}$ प	ग म	रे – सा
भां – म –	तो – – ह री	– कि	यो – –

अंतरा

×	२	०	३
म प – नि प	सां –	सां – –	सां – नि सां
स क – ल –	रे –	न – –	र – ति –
नि नि सां रें –	सां –	रें नि सां	प – नि प
रं – ग र ऽ	स –	भ रे –	खे – ल त
प प – ग ग	म –	प नि –	म प सां –
प ल – क –	सों –	प ल –	क – नां –
नि प – ग ग	ग म	रे – सा	
ला ग – नि –	– दि	यो – –	

राग सुघराई–संक्षिप्त विवरण

यह प्राचीन राग है । अष्टछापीय परंपरा में यह राग वर्षाऋतु के आगमसमय यानि रथयात्रा के पूर्व के दिनों में सूहा और सुघराई शृंगार के दर्शनसमय तक गाने की प्रणाली है । किन्तु आज उसकी यथार्थ परंपरा

प्राप्त करना दुर्लभ है। फिर भी नाथद्वारा—कांकरौली के वृद्ध कीर्तनकारों से सुना हुआ स्वरूप के आधार पर यहाँ प्रस्तुत किया जा रहा है।

आधुनिक संगीत–क्षेत्र में जो सुघराई प्रचार में है उससे यह स्वरूप कुछ भिन्न है। सुघराई के दो प्रकार माने जाते हैं (१) ध वर्ज्य का और (२) धैवतयुक्त। इसमें धैवत वाला प्रकार हमारी परंपरा से मिलता झुलता है। यह सुघराई राग अडाना और सारंग मिलकर बना हुआ है। हमारी परंपरामें शुद्ध धैवत का अडाना गाया जाता है। अतः शुद्ध धैवत का सुघराइ राग सुसंगत कहा जायगा।

यह राग का थाट काफी है। वादी पंचम और संवादी षड्ज हैं। गानसमय दिन का दूसरा प्रहर है। ग नि कोमल हैं तथापि आरोह में शुद्ध नि का प्रयोग किया जाता हैं। आरोह में धैवत वर्ज्य हैं और अवरोह में वक्र रूप से लिया जाता हैं। तार सां से। अवरोह करते समय सांध, नि प इस प्रकार वक्ररूप नि प की संगति ली जाती हैं। क्वचित् सरल रूप से भी प्रयोग किया जा सकता है। गांधार कोमल और गमरेसा इस प्रकार वक्र भी है, तथापि विवादी के नाते से क्वचित् शुद्ध गांधारका प्रयोग किया जाय तो वह आह्लादक होगा।

आरोह :–सारे, म प, नि सां।

अवरोह :–सांध नि प, म प, ध प, ग, मरे, सा.

पकड़ :— सांध, नि प, म प, रेमप, धप, मष, ग, मरेसा.

विस्तार :—

सा, रेसा, मप, ध निधप, प्रगमप, निधप, मप, ग, मरेसा।

पध, निधप, मपनिसां, निधनिसा, निधप, पम, पग, म, रे, सा॥

मप, निसां, रें, सां, निध, निधप, मप, धनिधप, पम, ग, मरे, सा॥

राग सुधराई—ताल चौताल

नई रितु आई माई परम सुहाई ।
नवसिंगार सज चलोरी सबे मिल जहां प्रीतम सुखदाई ॥१॥
तन मन भेट करन रुचि बाढी बिरहनि बिरह सताई ।
''कुंभनदास''प्रभु मानगढ तोरन व्रजजन सजत चढाई ॥२॥

स्थायी

०		३		४		×		०		२	
नि	प	—	म	म	प	सां	—	सां	नि	—	प
न	ई	ऽ	रि	तु	ऽ	आ	ऽ	ई	मा	ऽ	ई
ध	प	म	ग	म	प	ग	—	म	रे	—	सा
प	र	ऽ	म	ऽ	सु	हा	ऽ	ऽ	ई	ऽ	ऽ

अंतरा

×		०		२		०		३		४	
म	प	—	नि	—	नि	सां	—	सां	सां	—	सां
न	ऽ	ऽ	व	ऽ	सिं	गा	ऽ	र	स	ऽ	ज
नि	नि	सां	रें	—	सां	नि	सां	—	नि	ध	प
च	लो	ऽ	री	ऽ	स	बे	ऽ	ऽ	मि	लि	ऽ
म	म	ऽ	प	म	प	निध	प	म	रे	म	प
ज	हां	ऽ	प्री	ऽ	ऽ	तऽ	म	ऽ	सु	ऽ	ख
ग	म	—	रे	—	सा	नि	प	—	म	म	प
दा	ऽ	ऽ	ई	ऽ	ऽ	न	ई	ऽ	रि	तु	ऽ

संचारी

×		०		२		०		३		४	
म	म	—	प	—	ध	नि	ध	प	मग	म	प
त	न	ऽ	म	ऽ	न	भे	ऽ	ऽ	टऽ	ऽ	क
ध	प	—	म	म	प	ग	—	म	म	प	—
र	न	ऽ	रु	चि	ऽ	बा	ऽ	ऽ	ढी	ऽ	ऽ
नि	ध	—	म	—	म	प	प	—	ग	—	म
बि	र	ऽ	ह	ऽ	नि	बि	र	ऽ	ह	ऽ	स
नि	म	—	ग	—	म	रे	—	—	सा	—	—
ता	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	इ	ऽ	ऽ

"आभोग" अंतरानुसार ।

राग सूहा-बिलावल—ताल धमार

सुवा तेरी सोनें चोंच मढाऊं ।
कहेगो संदेशो प्रानप्यारी सों तब में बहुत रिझाऊं ॥२॥
फरकत भुजा नेन रतनारे यह धों काहे सुमाऊं ।
'मुरारिदास'प्रभु सांझ सभे सुपनो जु भयो सो जाग परे गुन गाऊं ॥२॥

स्थायी

३				×					२		०		
मग	म	रे	सा	रे	—	सा	म	प	निध	नि	सां	धनि	प
सु—	हा	ते	री	सो	—	नें	चों	—	च—	म	ढा	——	ऊं
ग	म	रे	सा	म	प	प	धनि	सांरें	सां	धनि	प	मग	म
सु	हा	ते	री	सो	—	नें	चों	——	च	म—	ढा	——	ऊं

अंतरा

×					२		०			३			
म	प	—	नि	प	नि	नि	सां	—	—	सां	—	—	—
क	हे	—	गो	—	—	सं	दे	—	—	सो	—	—	—
नि	सां	—	मं	—	रें	सां	रें	—	—	सां	—	धनि	प
आ	—	—	न	—	—	पि	या	—	—	रे	—	कों—	—
म	म	—	प	—	—	प	मप	धनि	सां	—	—	ध	प
त	व	—	मैं	—	—	व	हु—	——	—	—	—	त	रि
म	प	—	मग	म	रे	—	सा	—	—	मग	म	रे	सा
झा	—	—	——	—	—	—	ॐ	—	—	सु—	हा	ते	री

राग बिलावल

बिलावल राग अति प्राचीन है । संस्कृत ग्रन्थों में इसका नाम बेलावली—बेलावल—बिलावली से दृष्टिगत होता हैं । पुष्टिसम्प्रदाय के हवेली-संगीतपरंपरा में यह राग प्रातःकालीन रागो में मुख्य माना जाता है । यह राग मंगला के दर्शन के बाद शृंगार के अवसरों में एवं शृंगारदर्शन के समय अधिकतर गाया जाता हैं । क्वचित् उत्सवादि की विशिष्ट प्रणाली अनुसार मंगलादर्शन में भी यह गाये जाने की भी प्रथा है । किन्तु वह अपवाद के रूप में ही माना जायगा ।

इस राग का गान-समय शास्त्रोक्त नियम अनुसार दिन का प्रथम प्रहर माना जाता है । यही मर्यादा अनुसार इस राग के सभी प्रकारों के गाने की प्रथा आज तक दिखाई देती हैं । वर्षभर की

सेवाप्रणाली में यह राग गाया जा सकता है। किन्तु हेमंत शिशिर वसंत्त और वर्षा ऋतु की कीर्तनप्रणाली में यह राग कुछ समय के लिए गौण बन जाता है, अर्थात् उन दिनों में इस राग का गान बंद हो जाता है। केवल बधाई उत्सवादि त्यौहारों में बारहों मास गाने का रिवाज है। नित्य उत्सव त्यौहार आदि वर्षभर की सेवाप्रणाली में यह राग के पदों का साहित्य विपुल प्रमाण में प्राप्त होता है। अधिकतर यह साहित्य केवल 'राग–बिलावल' इस शीर्षक के अन्तर्गत संगृहीत होते हुए भी प्राचीन हस्तलिखित ग्रंथों में इस राग के अन्य प्रकारों का उल्लेख भी पाया जाता हैं। इस उल्लेख के अतिरिक्त गान-बंदिश के आधार पर राग के ६ प्रकार दिखाई देते हैं। इन प्रकारों की चर्चा के आरम्भ पहले राग 'बिलावल' के संबंध में विचार करें।

सम्प्रदाय की गानप्रणाली में बिलावल राग का सबसे पहले विनियोग हुआ है। श्रीमद्वल्लभाचार्यजी ने अष्टछाप के प्रथम गायक श्री कुम्भनदासजी को सर्वप्रथम वि. सं. १५५५ में कीर्तनगान की जब आज्ञा की थी तब उन्होंने प्रथम बिलावल राग में ही 'सांझ के सांचे बोल तिहारे' यह पद का गान किया था। तदुपरान्त श्रीसूरदासजी ने भी श्रीमद्वल्लभाचार्यजी की शरन में आने के बाद 'चकहरी चल चरन सरोवर' इस पद का ही प्रथम राग बिलावल में ही गान किया था।

भारतीय संगीत में राग–कुटुम्ब की व्यवस्था नष्ट होने के बाद मेल(थाट)पद्धति का प्रचार हुआ। उत्तर हिन्दुस्तान की इस मेल-(थाट)पद्धति अनुसार इस राग का शुद्ध सप्तक माना जाता है। उत्तरीय पद्धति का मुख्य थाट 'बिलावल' ही है। इस हकीकत की प्राचीन मान्यता के लिये श्रीकुम्भनदासजी तथा श्रीसूरदासजी को ही प्रथम अधिकारी माना जायगा। हिं. सं. पद्धति का महत्त्वपूर्ण 'तोके तुल हिन्द' नामक उर्दू ग्रन्थ में अपना शुद्ध स्वरसप्तक बिलावल होना चाहिए

ऐसा स्पष्ट उल्लेख किया गया है। ई. स. १८ वीं शती में आजमखान के आश्रित मिरज़ाखान ने इस ग्रन्थ की रचना की। संस्कृत ग्रन्थों में भी शुद्ध स्वर-सप्तक 'बिलावल' होने का राजा सुरेन्द्र मोहन टागोर के गायक गुरु क्षेत्रमोहन स्वामी मानते थे।

रागोंकी कुटुम्बव्यवस्था के समय में राग-रागिनियों के ध्यानस्वरूप का वर्णन भी पाया जाता है। "संगीत-दर्पण" ग्रन्थ में वेलावली राग का स्वरूपवर्णन निम्न प्रकार किया गया है :

संकेतदीक्षां दयिते च दत्त्वा वितन्वती भूषणभंगकेषु।
मुग्धाः स्मरन्ती स्मरमिष्टदेवंमु बेलावली नीलसरोजकान्तिः॥
(अ. २, पृ. ६१)

स्वरूपवर्णन के बाद प्राचीन ग्रन्थों में इस बेलावली (बिलावल) के विषय में "संगीतरत्नाकर" में उल्लेख है कि बेलावली कुकुभ राग की भाषा भोगवर्धिनी में से उत्पन्न होती है।[१] ग्रह, अंश और न्यास-स्वर धैवत है। गान्धार, पंचम अपन्यास है। रिवर्जित है। तारस्थान में ध और म प्रस्थानावधि गान्धार है।

बिलावल के विषय में प्राचीन ग्रन्थों का उल्लेख देख लेने के बाद आज का प्रचलित स्वरूपके समर्थन करने वाले ग्रन्थों में से कुछ के उदाहरण देखें।

"राग-कल्पद्रुमांकुर" ग्रन्थ में विलावल का वर्णन करते हुए कहा है

रागो बेलावलीति प्रथित इह सदा मान्यतीव्रस्वरेषु
षड्जन्यासग्रहोऽयं प्रकृतिसुरचिरो धैवतांशो गमंत्री।
आरोहेऽथो गनी स्तो विलसति निगयोर्वक्रिता चावरोहे
प्रातर्गेयोऽभिगीतो रमयति हृदयं शृण्वतामेष पूर्णः॥६॥

---

[१] विभाषा कुकुभे भोगवर्धनो तारमन्द्रगा।
धैवतांशग्रहन्यासा गापन्यासा रिवर्जिता॥

बेलावली (बिलावल) राग में मध्यम कोमल और बाकी सभी स्वर शुद्ध लगते हैं । षड्ज स्वर न्यास होता है तथा अधिकतर इसी स्वर से ही आरम्भ होता है । निषाद और गान्धार स्वर वक्र रहते हैं । धैवत स्वर वादी और गान्धार संवादी है । प्रकृति अति मधुर है तथा संपूर्ण जाति का यह राग है। जो कि प्रातःकालीन समय में गाने से श्रोताओं के मन को आनंदित करता है ।

तथा 'राग-चंद्रिकासार' ग्रन्थ में भी इसी प्रकार कहा है :

मृदु मध्यम तीवरी सबही, सुर सोहत जेहि मांहि ।
धग वादी संवादी है, कहत बिलावल ताहि ॥३॥

बिलावल-राग के विषय में उपर्युक्त उल्लेखों से स्पष्ट होता है कि इस राग की परंपरा प्राचीन समय में थी और आज भी यह राग विशेष प्रचार में है । इतना ही नहीं किन्तु इस राग के स्वरों की मेलपद्धति में मुख्य एवं प्रथम मेल (थाट) के तोरसे माना जाता है । उत्तरभारतीय संगीतपद्धति में शुद्ध स्वर का मुख्य मेल बिलावती ही कहा जाता है । इस बिलावल राग में से जो विभिन्न प्रकार उत्पन्न होते हैं उनमें से भारतीय संगीत की अष्टछापपरंपरा में प्रायः ६ प्रकार का गान किया जाता है ऐसा लेखक का मानना है। उनमें से यहां (१) शुद्ध बिलावल (शंकराभरण) और (२) अल्हैया बिलावल के विषय में हम प्रथम चर्चा करेंगे । इसके बाद (३) नट—बिलावल, (४) कुकुभ—बिलावल, (५) गौड—बिलावल और (६) देवगिरि बिलावल के विषय में आगे जाकर विचार करने का होने से उसकी चर्चा यहाँ पर स्थगित रक्खेंगे ।

अष्टछाप के आठों संगीत-कीर्तनकारों ने बिलावल राग में भगवल्लीला का गुणगान किया है । इतना ही नहीं परन्तु पुष्टिमार्गीय हवेली-

संगीत के अन्य पद–गानकर्ताओंने भी अधिकतर इस राग में ही गान किया है । जो सुप्रसिद्ध है ।

किन्तु एक बात ध्यान में रखनी चाहिए कि सम्प्रदाय के संग्रहों में केवल 'राग–बिलावल' शीर्षक से प्राप्त होने वाले विविध प्रकारों की चर्चा हम कर रहे हैं । शुद्ध बिलावल राग में गाये या गाये जानेवाले पदों की संख्या अल्प प्रमाण में ही है और वह आज हवेलीसंगीत के मुख्य स्थानों में अमुक कीर्तनकारों से ही नहीं, परन्तु भारतीय संगीत के प्रसिद्ध घरानेवाले गायकों में भी यही परिस्थिति दिखाई देती है । यह चर्चा करते समय यहाँ शुद्ध 'बिलावल' के विषय में शास्त्रीय पहिचान समझ लीजिए :—

राग–शुद्ध बिलावल आरोहावरोहस्वरूप :—

सा, रे, ग, म, प, ध, नि, सां । सां, नि, ध, प, म, ग रे, सा

सामान्य स्वरस्वरूप :—

सा, रेसा, गप, धनिप, निसां, सानिधपध, मग, मरे, सा

"लक्ष्यसंगीत" ग्रन्थ के द्वितीय अध्याय में से निम्नलिखित वर्णन उपयोगी होगा ।

[१]शंकराभरण थाट में से बिलावल राग निकलता है । षड्ज वादी माना

---

[१] शंकराभरणे मेले रागो बेलावलः स्मृतः ।
षड्जांशको बुधैः प्रोक्तो धैवतांशी अपि संमतः ॥
अस्य गानं मतं आरोहणं भवेत्तत्र अल्पस्वरसंयुतम् ।
प्रातरुत्तरांगप्रधानकम् ॥
प्रातःकालीयकल्याण इति केचिद्वदन्त्यमुम् ।
अवरोहे गदौर्बल्यं कल्याणे च निवरिते ॥
गमयोः संगतिस्तत्र नित्यं वैचित्र्यकारिणी ।
आरोहे तु निवक्रत्वं केषांचित्सुमतं सताम् ॥

जाता है और कोई कोई धैवत को मानते हैं । आरोह में मध्यम और निषाद स्वरों का अल्पत्व है । इस राग का गान उत्तरांगप्रधान होने से प्रातःकालीन समय उचित माना जाता है । पंडितजन उसे सुबह का कल्याण भी कहते हैं । अवरोह में गान्धार स्वर होने से कल्याण से बचाया जा सकता हैं।

बिलाबल राग का स्वरस्वरूप अर्थात् स्वरविस्तार इस प्रकार से होगा ।

१. सा, रेसा, गमरेसा, गमप, मग, मरे, सा
२. सा, रेसा, गमरेसा, निध, निधप, पध, सा, सारेगम, ग, मरे, सा
३. साग, मग, मरे, सा, धधप, धमग, मरे, सा
४. सारेगम, रेगम, पमगमरे, धधप, निधप, धमग, रेगमप, म, ग,
मरे, सा
५. सारेगमरे, सः, सारेगमधप, पमगमरेसा,
सारेगमपधनिसां, सांनिधपमग, मरे, सा
६. सा, गम, रेगम, प, धध, निध, सां, निध, प, धधमग
मरें, गम, धमग, मरे, गम, रेसा ।
७. पप, व, निसां, सारेसां, सांरेंगंमंरेंरेंसां, निध, पमगमरे, गमध, प
मग, मरे, सांनिमपधनिध, सां, धनिसां, सारेगम, रेंरेंसां, रेंसां, धम,
मग, मरे, रेग मप, गमग, मरे, रेसा,

अब (शुद्ध) बिलावल राग में श्रीचतुर्भुजदासजी का खंडिता के गान का हवेलीसंगीत के क्रम में गाये जाने वाला निम्न पद उदाहरण-रूप स्वर-लिपि के साथ यहाँ प्रस्तुत कर रहें हैं ।

राग बिलाचल–ताल चौताल

मोहन घूमत रतनारे नेन सकुचत कछु कहत बेन
सेनही सें न उत्तर देत नंद के दुलारे ।
भूखन बसन भांति–भांति अनुपम छबि कही न जात
लटपटी सुदेस पाग चित्तको चुरावे ॥

स्थायी

									ग	प	म
									मो	ह	न
×		०		२		०		३		४	
नि	ध	नि	सां	रें	सां	सां	—	सां	ध	ध	प
घू	—	म	त	र	त	ना	—	रे	ने	—	न
ध	म	ग	म	रे	सा	सा	रे	ग	म	ग	रे
स	कु	च	त	क	छु	क	ह	त	बे	—	न
ग	प	प	नि	ध	नि	सां	रें	गं	रें	सां	सां
सें	न	ही	सें	—	न	उ	त्त	र	दे	—	त
रें	सां	ध	प	ध	म	ग	रे	सा	ग	प	प
नं	—	द	के	दु	ला	ऽ	रे	—	मो	ह	न

अंतरा

×		०		२		०		३		४	
प	प	म	ध	नि	नि	सां	—	सां	सां	—	सां
भू	ख	न	ब	स	न	भां	—	ति	भां	—	ति
सां	रें	गं	मं	पं	मं	गं	मं	रें	सां	—	सां
अ	नु	प	म	छ	बि	क	ही	न	जा	—	त

रें	सां	सां	ध	प	ध	ग	म	प	नि	ध	नि
ल	ट	प	टी	—	सु	दे	—	स	पा	—	ग
सांनि	सां	ध	म	ध	म	ग	रे	सा	ग	प	प
चि--	—	त	कौं	चु	रा	—	वे	—	—	—	—

राग बिलावल–ताल धमार

सांझ के सांचे बोल तिहारे,
रजनी अनत जागे नंदनंदन आये निपट सवारें ॥१॥
आतुर भये नीलपट ओढे, पीरे बसन बिसारे,
'कुम्भनदास' प्रभु गिरधरन लाल तुम, भलैं जु बचन प्रतिपारें ॥२॥

स्थायी

										ग	रे	गम	प
										सां	—	झ	के
×					२		०			३			
धनि	सां	धप	मग	मरे	गम	प	मग	मरे	सा	ग	रे	गम	प
सां	—	चे-	बो-	--	ल-	ति	हा-	--	रे	सां	—	झ	के

अंतरा

×					२		०			३			
प	प	निध	नि	नि	सां	सां	सांरें	गं	मं	गं	रें	सां	सां
र	ज	नी-	अ	न	त	जा	गे-	नं	द	नं	—	द	न
रें	सां	—	ध	प	प	ध	मग	म	रे	ग	रे	गम	प
आ	ये	—	नि	प	ट	स	वा-	—	रे	सां	—	झ—	के

संचारी

×					२		०			३			
म	म	मग	प	प	—	प	ध	ग	म	ग	प	ध	नि
आ	तु	र—	भ	ये	—	नी	ल	प	ट	आ	—	ढें	—
सां	ध	प	म	ग	रे	गप	प	ग	म	रे	—	सा	—
पी	रे	—	व	स	न	वि—	सा	—	—	—	—	रे	—

‘आभोग’ अन्तरानुसार ।

शंकराभरण

बिलावल के स्वरूप से मिलता जूलता ही एक शंकराभरण राग भी हवेलीसंगीत के प्राचीन संग्रहों में क्वचित् देखने में आता है । जब कि ‘शंकराभरण’ संज्ञा के पदों की संख्या अल्प है । परन्तु हवेली-संगीत के जन्मदाताओं में से गोविन्द स्वामी तथा चतुर्भुजदासजी-रचित पदसंग्रहों में इसका उल्लेख प्राप्त होने से यहां शंकरामरणे के विषय में संक्षिप्त विवरण देना उचित होगा ।

शंकराभरण राग अपनी उत्तरभारतीय पद्धतिका नहीं हैं किन्तु कर्णाटकी पद्धति का एक प्राचीन राग हैं । इस पद्धति में यह राग लोकप्रिय है । वहाँ पर इस राग की परंपरा आज तक वैसी ही दिखाई देती है । अपनी उत्तरभारतीय पद्धति में जैसे बिलावल को शुद्ध—स्वर का मुख्य थाट मानने में आता है उसी प्रकार दक्षिणी पद्धति में शंकराभरण मेल (थाट) माननें में आता है ।

पंडित दामोदरने अपने ग्रन्थ में कहा भी है :

बैलावल्याः स्वराः प्रोक्ताः शंकराभरणे बुधैः ॥

शंकराभरण के स्वरों को पंडित लोग बिलावल ही मानते हैं ।

"लक्ष्यसंगीत" में भी चतुर पंडित (भारतखण्डेजी) ने लिखा है :

शंकराभरणे मेले रागो बेलावलः स्मृतः ।

बिलावल राग शंकराभरण थाट में से निकलता है । इस प्रकार के ग्रन्थकारों के विद्वानों से ही नहीं, परन्तु प्रचार में भी आज शंकराभरण और बिलावल का स्वर–स्वरूप एक जैसा दिखाई देता है, अर्थात् इन दोनों का गान–समय, जाति वगेरह एक ही होने से बिलावल के पदों को संग्रहकर्ता ने शंकराभरण संज्ञा के अन्तर्गत रख दिया ऐसी संभावना है ।

सम्प्रदाय के शुरू से ही श्रीमद्वल्लभवंश के गोस्वामी बालकों का दक्षिण प्रदेश के साथ संबंध सुप्रसिद्ध है । इस संपर्क के कारण दाक्षिणात्य संगीत का अच्छा ज्ञान होने से तथा दोनों रागों में साम्य होने के कारण बिलावल के कोई पद को शंकराभरण शीर्षक के अन्तर्गत लिखना या लिखाया गया हो तो भी असंभवित नहीं है ।

इसके सिवाय अन्य कारण भी संभवित हैं :

हवेली–संगीत में शुद्ध बिलावल सिवाय के अन्य सभी प्रकारों में दोनों निषादों का प्रयोग होता है और ये सभी प्रकार बिलावल के शीर्षक के अन्तर्गत देखने में आते हैं । उससे कोमल निषाद के प्रयोग वाले अन्य प्रकारों से अलग रख कर बिलावल शुद्ध स्वरूप बताने के लिए बिलावल के शुद्ध पदों के साम्य से शंकराभरण शीर्षक के अन्तर्गत लिए गए हों तो वह भी असंभवित नहीं है । चाहे जो भी कारण हो, परन्तु शंकराभरण दक्षिणी संगीत का राग और बिलावल उत्तरभारतीय संगीत का राग होने से शंकराभरण शीर्षक के अन्तर्गत लिखे पदों का शुद्ध बिलावल में ही समावेश करेंगे तो वह लेखक के मातानुसार उचित होगा ।

राग अल्हैया विलावल

सम्प्रदाय की प्रणाली के अन्तर्गत गाये जाने वाले राग के षड्विध प्रकारों में से पदसंग्रह ग्रन्थों में वहुधा विलावल संज्ञा से ही समावेश हुआ है । यह हकीकत पूर्व प्रकरण में देखने के बाद अब इस अल्हैया विलावल के विषय में समझेंगे । शास्त्रदृष्टि से देखने से अल्हैया नाम प्राचीन ग्रन्थों में मिलेगा नहीं, षरन्तु मात्र 'रागतरंगिणी' नाम के मध्यकालीन ग्रन्थ में बिलावल और अल्हैया बिलावल ऐसे दो नाम दृष्टिगोचर होंगे । सारांश यही है कि अल्हैया बिलावल को भिन्न समझकर गाने वाले गायकों की परंपरा भी अल्प मात्रा में देखने में आती थी । इस हकीकत की पुष्टि के लिए पंडित भातखंडेजी–लिखित शास्त्रग्रन्थ भाग–१ में से निम्न अवतरण उपयोगी होगा । वे लिखते हैं कि..........."प्रचार में शुद्ध बिलावल और अल्हैया बिलावल ऐसे निराले गाने वाले गायक आप को कहीं ही मिलेंगे । आष किसी भी गायक को बिलावल गाने का कहेंगे तो वह उसी दम अल्हैया गाने लगेगा । उसके बाद शुद्ध बिलावल गाने की वंदिश करना मुझे आता नहीं है ऐसा ही कहेगा । किन्तु कोई उसके जैसा ही गाने लगेगा और समय पसार कर देगा ।"

भारतवर्ष के लगभग सभी गायक-वादकों में जब उपर्युक्त विधानानुसार परिस्थिति देखने में आती थी तब अष्टछापसंगीत–घरानाओं में भी यह हकीकत प्रवर्तमान थी, और दो या तीन पच्चीसी पहले के अर्वाचीन ग्रन्थों में बहुधा यही हकीकत दृष्टिगत होती है । इसके लिए नीचे लिखे दो–तीन उदाहरण बस हो जायेंगे ।

प्रो. बर्वे ने अपने ग्रन्थ में बिलावल का वर्णन करते हुए लिखा हैं कि 'तार स्थानों के आसपास विशेष गति, अवरोह में ग कम लिया

जाता है और नि कोमल कभी कभी किसी समय अवरोह में ही लिया जाता है ।'[१]

पंडित आदित्यरामजी ने बिलावल राग के वर्णन में बताया है कि 'यह राग संपूर्ण हैं । आरोह में मध्यम व निषाद कम मिलाया जाता है । निषाद दो हैं और सब बाकी के शुद्ध स्वर हैं । आरोह में दो निषाद साथ भी अच्छे दिखाई पडते हैं । अवरोह में कोमल निषाद लेना । पहिले तो आधार अवरोह में वर्ज्य था, परन्तु अब तो मिलाया जाता है और प्रधान सुर गिना जाता है ।'[२]

'संगीतकलाधर' ग्रन्थ में भी बिलावल राग के वर्णन में दोनों निषाद मानने में आये हैं ।

उपर्युक्त उल्लेखों में बिलावल राग में दोनों निषादों का प्रयोग स्पष्ट रूप से बताया है, जिसको आजकल अल्हैया बिलावल से पहिचाना जाता है । यह सब देखते हुए स्पष्ट होता है कि सम्प्रदाय की परंपरा में तथा अन्य घरानाओं में भी अधिकतर अल्हैया बिलावल को बिलावल की संज्ञा से पहिचानने का व्यवहार पांच सात शती पहले से ही विशेष प्रसिद्ध था ।

सम्प्रदाय के प्राचीन पदग्रन्थों में अल्हैया बिलावल के विषय में अलग अल्हैया बिलावल का नामोल्लेख देखने में आया नहीं है, परन्तु विक्रम की १८ वी शताब्दी और उसके बाद लिखे गये पदसंग्रहों मे किसी किसी स्थान पर अल्हैया बिलाबल का नाम दृष्टिगोचर होता है । सम्प्रदाय में लिखे हुए पदसंग्रहो के दो प्रकार देखने में आते हैं (१) लहिया के हाथ से लिखाया हुआ और (२) गायन–कीर्तनकारों ने अपने ही हाथ से लिखा हुआ । जिसमें लहिया के हाथ से लिखे संग्रहों में लेखन की शुद्धि विशेषतः दिखाई देती है, जब कि गायक कीर्तनकारों ने अधिकतर लेखन–ज्ञान और अक्षर–ज्ञानविहीन होने के कारण उनके लिखे संग्रहों

---

१. गायन वादन पाठ्य, पृष्ठ–२७४

२. संगीतादित्य, पृष्ठ–५८